भोजपुरी और उसका साहित्य

: भोजपुरी-भाषा और साहित्य का परिचयात्मक विश्लेषण :

लेखक
डॉ० कृष्णदेव उपाध्याय
एम० ए० पी-एच० डी०

सम्पादक क्षेमचन्द्र 'सुमन'

सरस्वती सहकार, दिल्ली-शाहदरा
की ओर से प्रकाशक
राजकमल प्रकाशन
दिल्ली बम्बई इलाहाबाद पटना मद्रास

निवेदन

स्वतन्त्र भारत के साहित्यिक विकास में भारत की भाषाओं तथा उपभाषाओं का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान है। आज यह अत्यन्त खेद का विषय है कि हमारे देश का अधिकांश पठित जन-समुदाय अपनी प्रादेशिक और समृद्ध जनपदीय भाषाओं के साहित्य से सर्वथा अपरिचित है। कुछ दिन पूर्व हमने 'सरस्वती सहकार' संस्था की स्थापना करके उसके द्वारा 'भारतीय साहित्य-परिचय' नामक एक पुस्तक-माला के प्रकाशन की योजना बनाई और इसके अन्तर्गत भारत की लगभग २८ भाषाओं और समृद्ध उपभाषाओं के साहित्यिक विकास की रूप-रेखा का परिचय देने वाली पुस्तकें प्रकाशित करने का पुनीत संकल्प किया। इस पुस्तक-माला का उद्देश्य हिन्दी-भाषी जनता को सभी भाषाओं की साहित्यिक गति-विधि से अवगत कराना है।

हर्ष का विषय है कि हमारी इस योजना का समस्त हिन्दी-जगत् ने उत्फुल्ल हृदय से स्वागत किया है। प्रस्तुत पुस्तक इस पुस्तक-माला का एक मनका है। आशा है हिन्दी-जगत् हमारे इस प्रयास का हार्दिक स्वागत करेगा। इस प्रसंग में हम इस पुस्तक के लेखक डॉ० कृष्णदेव उपाध्याय के हार्दिक आभारी हैं, जिन्होंने अपने व्यस्त जीवन में से कुछ अमूल्य क्षण निकालकर हमारे इस पावन यज्ञ में सहयोग दिया है। राजकमल प्रकाशन के सञ्चालकों को भूल जाना भी भारी कृतघ्नता होगी, जिनके सक्रिय सहयोग से हमारा यह स्वप्न साकार हो सका है।

जी. १० दिलशाद गार्डन,
दिल्ली-शाहदरा

—क्षेमचन्द्र 'सुमन'

प्रस्तावना

'भोजपुरी और उसका साहित्य' नामक पुस्तक को आज पाठकों के सामने प्रस्तुत करते हुए मुझे प्रसन्नता हो रही है। प्रस्तुत पुस्तक में भोजपुरी भाषा और साहित्य का सङ्क्षिप्त विवरण देने का प्रयास किया गया है। इसमें लोक-साहित्य की मीमांसा के अतिरिक्त भोजपुरी लोक-सगीत, लोक-कला तथा लोक-नृत्य और लोक-नाट्य की चर्चा भी की गई है। इस प्रकार इस पुस्तक को सर्वाङ्गीण बनाने में कोई प्रयत्न उठा नहीं रखा गया है। जहाँ तक मुझे ज्ञात है भोजपुरी भाषा और साहित्य के इतिहास को संक्षिप्त रूप में प्रस्तुत करने का यह सर्वप्रथम प्रयास है। इन पृष्ठों में जो सामग्री दी गई है वह सर्वथा मौलिक है। मुझे इस प्रयत्न में कहाँ तक सफलता प्राप्त हुई है इसका निर्णय तो अधिकारी विद्वान् ही कर सकते है। मै तो कालिदास के शब्दों में यही कहना चाहता हूँ कि—

"आपरितोषात् विदुषां न साधु मन्ये प्रयोग विज्ञानम्।"

मुझे इस पुस्तक के लिखने में पितृ-कल्प ज्येष्ठ भ्राता पं० बलदेव उपाध्याय एम० ए०, साहित्याचार्य; रीडर, संस्कृत-विभाग हिन्दू विश्वविद्यालय, काशी से प्रेरणा तथा प्रोत्साहन मिला है। आदरणीय अग्रज डॉ० वासुदेव उपाध्याय एम० ए०, डि० लिट्०, लेक्चरर, प्राचीन भारतीय इतिहास तथा संस्कृत-विभाग, पटना विश्वविद्यालय, पटना ने भी इस सम्बन्ध में अनेक बहुमूल्य

सुझाव मेरे सामने उपस्थित किये हैं। अत उपर्युक्त कृपा के लिए मै दोनों भाइयों का हृदय से अभिनन्दन करता हूँ। मेरे प्यारे चिरंजीव हरिशंकर उपाध्याय बी० ए०, साहित्यरत्न ने इस पुस्तक की पाण्डुलिपि तैयार करने में मेरी बड़ी सहायता की है। अतः वे मेरे आशीर्वाद के भाजन हैं।

यदि इस पुस्तक से भोजपुरी-साहित्य का थोड़ा भी प्रचार हो सका तो मैं अपने परिश्रम को सफल समझूँगा।

६१, लूकरगंज
प्रयाग

कृष्णदेव उपाध्याय

क्रम

१. विषय-प्रवेश	-	-	६
२. भोजपुरी भाषा	-	-	१३
३. सन्त-साहित्य	-	-	३२
४. लोक-साहित्य	-	-	५५
५. आधुनिक साहित्य	-	-	७६
६. लोक-काव्य-संग्रह	-	-	११३
७. लोक-नृत्य—नाट्य	-	-	१२२
८. लोक-संगीत	-	-	१३१
९. लोक-कला	-	-	१३६
१०. उपसंहार	-	-	१४४
अध्ययन-सामग्री	-	-	१४६

: १ :

विषय-प्रवेश

किसी देश का लोक-साहित्य उस देश की जनता के हृदय का उद्गार है। वह उनकी हार्दिक भावनाओं का सच्चा प्रतीक है। यदि किसी देश की सभ्यता का अध्ययन करना हो तो सर्वप्रथम उसके लोक-साहित्य का अध्ययन आवश्यक होगा। लोक-साहित्य जन-समाज की वस्तु है, अतः उसमे जनता का हृदय लिपटा रहता है। यह साहित्य कृत्रिमता से कोसो दूर रहता है। गॉव के अशिक्षित कवि के हृदय मे जो भाव उमड़ पड़ते हैं उन्हे वह टूटी-फूटी पंक्तियो मे गाने लगता है। ये ही पक्तियॉ लोक-गीत का रूप धारण कर लेती है। गॉव की चौपाल मे बैठा हुआ बूढा किसान जाडे की रात मे आग के चारो ओर बैठे हुए बालको को प्रेम और आश्चर्य से भरी हुई कहानियो को सुनाता है। वह उनके कुतूहल को बढ़ाता हुआ, कल्पना की लगाम को ढीली करके तब तक उनको रस-सागर मे डुबोता है जब तक वे उसमे निमग्न नहीं हो जाते। ये ही कहानियॉ लोक-कथा कहलाती है जिनमे जन-जीवन का प्रेम छलका पडता है। बरसात के दिनो मे वीर-रस से परिपूर्ण आल्हा को गाने वाले अल्हैत अपनी ओजस्विनी वाणी से जन-मन का अनुरञ्जन

किया करते है। इन लम्बे कथानक वाले गीतो—गाथाओ को सुनकर जनता के मन मे वीर-रस का सचार होने लगता है, जोश मे आकर उनकी भुजाएँ फड़कने लगती हैं। परन्तु लोक-साहित्य का विस्तार यहीं तक सीमित नहीं है। स्नेहमयी माता अपने दुधमुँहे बच्चे को पालने के गीत गा-गाकर उसे सुलाती है। अपनी प्रत्येक थपकी के साथ वह गीत की किसी-न-किसी कड़ी को गाती हुई निद्रा-देवी का आवाहन करती है। बालक जब आपस मे खेल खेलते है तब वे भी विभिन्न खेलो मे भिन्न-भिन्न प्रकार के गीत गाते हैं। इन्ही सब लोक-गीतो, गाथाओ और कथाओ को लोक-साहित्य के नाम से अभिहित किया जाता है।

एक समय था जब संसार के समस्त देशो मे मनुष्य प्रकृति देवी का उपासक था। वह प्राकृतिक जीवन व्यतीत करता था। उस समय उसका आचार-विचार, रहन-सहन सब सरल, सहज और स्वाभाविक था। वह आडम्बर या दिखावा से बहुत दूर रहता था। उसके कोश मे 'कृत्रिमता' शब्द का नितान्त अभाव था। वह स्वाभाविकता की गोद मे पला हुआ जीव था। वह स्वच्छन्दता के स्वतन्त्र वातावरण मे विचरण करता था। उसके समस्त कार्य—उठना-बैठना, बोलना-चालना, हँसना-रोना स्वाभाविकता से पगे रहते थे। चित्त के आह्लाद के निमित्त कविता की रचना उस समय भी होती थी और आज भी होती है। परन्तु दोनो युगो की कविताओ मे आकाश-पाताल का अन्तर है। उस समय की इस अकृत्रिम कविता का जो अश अवशिष्ट रह गया है वही आज हमे लोक-काव्य अथवा लोक-गीत के रूप मे उपलब्ध होता है।

भारतवासियो का जीवन सदा से सगीतमय रहा है। ससार मे शायद ही कोई दूसरी जाति होगी जिसके जीवन पर संगीत का इतना प्रचुर प्रभाव पड़ा हो। प्रत्येक उत्सव, पर्व और त्यौहार के अवसर पर समयोचित गीत गाकर मनोविनोद करना हमारी भारतीय दिनचर्या का एक आवश्यक अग रहा है और अब भी है। पुत्र-जन्म, यज्ञोपवीत,

विवाह, द्विरागमन आदि समस्त उत्सवो के अवसर पर स्त्रियाँ अपने कोमल कल-कण्ठो से रमणीय गीत गाकर उपस्थित जन-मण्डली का पर्याप्त मनोरजन किया करती हैं।

भारतीय लोक-कथाओ की परम्परा भी कुछ कम प्राचीन नहीं है। भारतीय कथाओ का ससार-विशेषकर पाश्चात्य देशो के कथा-साहित्य पर क्या प्रभाव पड़ा है, यह बात विद्वानो से अविदित नहीं है। भारत सम्भवतः संसार के सब देशो मे कथा-साहित्य मे सबसे अधिक समृद्धि-शाली देश रहा है। सस्कृत भाषा मे लिखा गया 'कथा-सरित्सागर' सचमुच ही कथाओ के संग्रह का समुद्र है। लोक-गाथाओ के विषय में भी यही बात समझनी चाहिए।

हमारी ऐसी दृढ़ धारणा हैं कि भारतवर्ष लोक-साहित्य की सम्पत्ति मे संसार के अन्य देशो से सबसे अधिक धनवान है। इस देश मे आर्य तथा द्रविड़ दो परिवार की भाषाएँ बोली जाती है। आर्य भाषाओ में पजाबी, हिन्दी, बिहारी, बॅगला, असमिया, उड़िया, मराठी और गुजराती आदि भाषाएँ सम्मिलित हैं तथा द्रविड भाषाओ के अन्तर्गत तमिल, तेलुगु, कन्नड और मलयालम भाषाएँ है। इन सभी भाषाओ की अनेक बोलियाँ (dialects) हैं और इन बोलियो की अनेक उप-बोलियाँ (sub-dialects) हैं। इनमे से प्रत्येक उपबोली के अन्तर्गत हजारो तथा लाखो की संख्या मे लोक-गीत, लोक-गाथाएँ तथा लोक-कथाएँ उपलब्ध होती हैं। उदाहरण के लिए केवल हिन्दी भाषा को ही लीजिए; इसमे प्रधानतया राजस्थानी, ब्रज, अवधी, भोजपुरी, बुन्देलखण्डी और छत्तीसगढ़ी बोलियाँ है। पुनः राजस्थानी की चार उपबोलियाँ—मारवाड़ी, ढूढाडी, मालवी और मालती हैं। इसी प्रकार भोजपुरी की तीन प्रधान उपबोलियाँ हैं, जिनमे सहस्रो नहीं तो लाखों की संख्या मे लोक-गीत, लोक-कथाएँ और लोक-गाथाएँ बिखरी पड़ी है। इन उपबोलियो में प्रचलित लोक-साहित्य का यदि संग्रह किया जाय तो महर्षि व्यास के महाभारत की भाँति 'लक्षश्लोकात्मक' अनेक ग्रन्थ लिखे जा सकते हैं।

इस विपुलकाय तथा विशाल लोक-साहित्य का सग्रह करने के लिए एक नहीं, अनेक व्यासो की आवश्यकता होगी। इसके लिए संग्रह तथा अनुसन्धान-कर्ताओ की सम्भवतः एक महती सेना पर्याप्त हो।

किसी सुप्रसिद्ध मानव-वैज्ञानिक (एन्थ्रोपोलाजिस्ट) ने लिखा है कि इङ्गलैण्ड लोक-गाथाओ के क्षेत्र मे अद्वितीय है। परन्तु यह कथन समुचित नहीं प्रतीत होता। लोक-साहित्य की सम्पत्ति मे भारतवर्ष जितना समृद्ध है उतना सम्भवतः ससार का अन्य कोई देश नही। उपर्युक्त भाषाओ, उनकी बोलियो और उपबोलियो मे जो लोक-साहित्य सुरक्षित है उसके अतिरिक्त भारत की वन्य तथा पर्वतीय जातियो मे भी इस साहित्य की सत्ता प्रचुर परिमाण मे पाई जाती है। मध्य प्रदेश की गोंड, बैगा, अगेरिया, मुरिया और कमार आदि जंगली जातियो का; छोटा नागपुर की सन्थाल, 'मुण्डा, बिरहोर, भुइया, खरिया और ओरॉव जातियो का तथा असम राज्य की नागा, मिशनी, अबोर और कह्वारी आदि अर्ध-सभ्य जातियो का लोक-साहित्य अनन्त है। इस प्रकार भारतवर्ष की विभिन्न भाषाओं और जातियो मे सुरक्षित लोक-साहित्य की समता संसार के किसी भी देश का लोक-साहित्य नहीं कर सकता। सचमुच ही यह लोक-साहित्य विराट् पुरुष के समान प्रचुर और अनन्त है।

भोजपुरी साहित्य प्रधानतया लोक-साहित्य ही है। अतः इसमे लोक-गीतो, लोक-गाथाओं तथा लोक-कथाओ की सख्या बहुत अधिक है। कुछ सन्तो ने भी इस भाषा को अपनी काव्य-कला का माध्यम बनाया है। आधुनिक कवि अपनी रचनाओ से इसके भाण्डार को भर रहे हैं। भोजपुरी साहित्य का वर्णन करने के पहले भोजपुरी भाषा का सामान्य परिचय देना अनुचित न होगा। अतः अगले अध्याय मे इसीका वर्णन किया जाता है।

: २ :

भोजपुरी भाषा

भारतीय भाषाओं में भोजपुरी का स्थान

भाषा-शास्त्र के विद्वानो ने समस्त भारतीय भाषाओ का अनुशीलन करके कुछ निश्चित सिद्धान्तो के आधार पर इनको अन्तरग तथा बहिरग भागो मे विभक्त किया है। अन्तरंग भाषा की (१) पश्चिमी शाखा और (२) उत्तरी शाखा नामक दो प्रधान शाखाएँ हैं। पश्चिमी शाखा के अन्तर्गत पश्चिमी हिन्दी (ब्रज आदि) राजस्थानी, गुजराती और पंजाबी आदि भाषाएँ है और उत्तरी शाखा में पश्चिमी पहाडी, मध्य-पहाडी और पूर्वी पहाड़ी आदि भाषाएँ परिगणित है। बहिरग भाषाओ की तीन प्रधान शाखाएँ है—(१) उत्तर-पश्चिमी शाखा—जिसमे काश्मीरी, कोहिस्तानी, पश्चिमी पजाबी और सिन्धी भाषा आती है। (२) दक्षिणी शाखा—जिसमे मराठी भाषा की गणना है। बहिरग भाषाओ की तीसरी शाखा है। (३) पूर्वी शाखा। इसके अन्तर्गत उड़िया, बंगला, असमिया और बिहारी भाषाएँ आती हैं। इस अन्तिम भाषा अर्थात् बिहारी की तीन बोलियाँ (डाइलेक्ट्स) प्रसिद्ध हैं—(१) मैथिली, (२) मगही और (३) भोजपुरी। इस प्रकार भोजपुरी बहिरग भाषाओं

की पूर्वी शाखा के अन्तर्गत बिहारी भाषा की एक बोली है।[1] यह क्षेत्र-विस्तार तथा इसके बोलने वालो की संख्या के आधार पर अपनी बहनो—मैथिली और मगही—से बडी है। अपनी प्रसिद्धि तथा महत्ता के कारण इसने भाषा की प्रतिष्ठा को प्राप्त कर लिया है।

भोजपुरी भारत की आर्य-भाषाओ मे पूर्वी अथवा मागध श्रेणी (मागधन ग्रुप) की भाषाओ मे सबसे पश्चिमी भाषा है। डॉ० ग्रियर्सन ने इन मागध-श्रेणी की भाषाओ को 'बिहारी' नाम से अभिहित किया है। बिहारी भाषा से उक्त विद्वान् का अभिप्राय केवल उस भाषा से है, जिसके अन्तर्गत तीन बोलियाँ—(१) मैथिली, (२) मगही और (३) भोजपुरी—प्रचलित हैं। यद्यपि भाषा-शास्त्र की दृष्टि से यह मत ठीक है, परन्तु मैथिली और मगही बोलियो मे बहुत अन्तर है। इसी प्रकार भोजपुरी की भी स्वतन्त्र सत्ता है तथा उपर्युक्त बोलियो से इसका कुछ विशेष सम्बन्ध नही है।

डॉ० सुनीतिकुमार चटर्जी ने मागध भाषाओ का वर्गीकरण तीन विभागो मे किया है।[2] उनके मतानुसार भोजपुरी का सम्बन्ध पश्चिमी मागध भाषाओ के समुदाय (ग्रुप) से है। मैथिली और मगही का सम्बन्ध केन्द्रीय मागध से, और बगला, असमिया तथा उड़िया भाषाओ का सम्बन्ध पूर्वी मागध समुदाय से है। इस प्रकार यह स्पष्ट ही ज्ञात होता है कि बगला, असमिया और उडिया भाषाएँ भोजपुरी भाषा की चचेरी बहनें हैं, जब कि मैथिली और मगही इसकी सगी बहनें होने का गौरव प्राप्त करती हैं।

क्षेत्र-विस्तार

उपर्युक्त तीनो बोलियो मे विस्तार की दृष्टि से विचार करने पर भोजपुरी का स्थान सर्वश्रेष्ठ दिखाई पडता है। इस भाषा का विस्तार-

१. डॉ० श्यामसुन्दरदास—'भाषा विज्ञान', पृष्ठ १५०-५१।

२. 'ओरिजिन एण्ड डेवेलपमेण्ट ऑफ बङ्गाली लेंग्वेज', भाग १।

क्षेत्र बहुत बडा है। उत्तर मे हिमालय की तराई से लेकर मध्य-प्रदेश की सरगुजा रियासत[1] तक इसका विस्तार है। बिहार राज्य (प्रान्त) मे यह शाहाबाद, सारन, चम्पारन, राँची, पालामऊ जिले का कुछ भाग और मुजफ्फरपुर जिले के उत्तरी-पश्चिमी भाग मे प्रचलित है। यह उत्तर-प्रदेश के पूर्वी जिलो—बनारस, गाजीपुर, बलिया, गोरखपुर, देवरिया, बस्ती—मे तथा जौनपुर और आजमगढ जिलो के आधे से अधिक भागो मे फैली हुई है।

भोजपुरी नामकरण का कारण

भोजपुरी भाषा का नामकरण बिहार राज्य के शाहाबाद जिले मे स्थित 'भोजपुर' नामक गॉव के नाम पर हुआ है। शाहाबाद जिले मे, बक्सर सब-डिवीजन मे भोजपुर नाम का एक बडा परगना है। इसी परगने मे 'नवका भोजपुर' और 'पुरनका भोजपुर' नाम के दो छोटे-छोटे गॉव है। ये गॉव डुमरॉव नगर से दो-तीन मील उत्तर मे गगा के निकट बसे हैं। ये दोनो गॉव आस-पास है और 'भोजपुर' नामक प्राचीन नगर के ही स्थान पर स्थित है। इसी प्राचीन 'भोजपुर' नगर के नाम से इस भाषा का नाम 'भोजपुरी' पड गया।[2] प्राचीन काल मे भोजपुर बडा समृद्धिशाली नगर था। यह उज्जैन-वशी पराक्रमी राजपूत राजाओ की राजधानी था। इस वश के प्रतिनिधि डुमरॉव राज्य के राजा आज भी विद्यमान है।

डॉ० बुकानन ने सन् १८१२ ई० में शाहाबाद जिले मे परिभ्रमण किया था। उसने अपने यात्रा-विवरण मे लिखा है कि उज्जैन-वशी राजपूतो ने यहॉ के मूल निवासियो को परास्त करके अपना राज्य स्थापित किया था। इन उज्जैनी राजपूतो की उत्पत्ति मालवा के सुप्रसिद्ध राजा

१. जिसका अब विलयन हो गया है।

२. दुर्गाशंकरप्रसाद सिंह—'भोजपुरी लोकगीतों में करुण रस', भूमिका, पृ० १।

भोज से मानी जाती है। ब्लाखमैन ने अपने 'आईने अकबरी' के अनुवाद मे भोजपुर के सम्बन्ध मे अनेक घटनाओ का उल्लेख किया है। अपने एक लेख मे भी उसने इसकी चर्चा की है।[1] अन्य अनेक उल्लेखो से यह पता चलता है कि प्राचीन काल मे 'भोजपुर' एक महत्त्वपूर्ण स्थान था, जिसे मालवा के उज्जैन-वशी राजाओ की राजधानी होने का गौरव प्राप्त था। ये उज्जैनी राजा मालवा से यहाँ आए थे। पश्चिमी बिहार मे इनकी सत्ता सन् १८५७ ई० तक अक्षुण्ण थी। इसी समय वीराग्रणी कुँवरसिह ने अँग्रेजो के विरुद्ध विद्रोह का झण्डा उठाया था। इस युद्ध मे कुँवरसिह पराजित हुए और इस प्रकार भोजपुर की प्राचीन महत्ता विनष्ट हो गई।

उपर्युक्त वर्णन से यह स्पष्ट पता चलता है कि 'भोजपुर' स्थान का नाम उन उज्जैनी राजाओ के नाम के कारण पडा, जो उज्जैन (मालवा) से आकर यहाँ बस गए थे। क्योकि ये लोग मालवा के सुप्रसिद्ध सस्कृत-विद्वान् तथा दानवीर राजा भोजराज या भोज के वंशज थे, अतएव ये लोग अपने नाम के साथ भोज की उपाधि को धारण करना अपना गौरव समझते थे। इन्हीं लोगो ने इस नगर को बसाया था। अतः इसका नाम 'भोज+पुर' अर्थात् भोज उपाधिधारी राजाओ का पुर या नगर पड गया।

भोजपुरी भाषा का व्यावहारिक प्रयोग

भोजपुरी एक जीवन्त भाषा है। जिस प्रकार इसके बोलने वालो मे शौर्य, उत्साह और जीवट पाए जाते है, उसी प्रकार इस भाषा मे भी जीवनी शक्ति हैं। यद्यपि भोजपुरी प्रदेश मे बालको की प्रारम्भिक तथा माध्यमिक शिक्षा खडी बोली हिन्दी मे दी जाती है, फिर भी अपने दैनिक व्यवहार मे यहाँ के निवासी इसी भाषा का प्रयोग करते हैं। उनके हृदय

१. **'जनरल ऑफ एशियाटिक सोसाइटी ऑफ़ बंगाल', सन् १८७१, पृ० ३—१२९।**

मे इसके प्रति अत्यधिक प्रतिष्ठा और प्रेम है। भोजपुरी प्रदेश के प्रत्येक भाग मे वहाँ के निवासी राजनीतिक, धार्मिक एव सामाजिक सभी प्रकार के विषयो की मीमासा अपनी प्रिय मातृभाषा मे ही करते है। कला, वार्त्ता तथा उपदेश इसी भाषा मे दिए जाते हैं। सभी मगल-कृत्यो के अवसर पर स्त्रियाँ भोजपुरी मे ही गीत गाती है। विवाह के अवसर पर जनता के मनोरंजन के लिए जो 'विदेसिया' नाटक खेला जाता है, उसकी भाषा भी भोजपुरी ही होती है। कहने का तात्पर्य यह है कि इस भाषा का प्रयोग दैनिक व्यवहार मे प्रचुरता के साथ किया जाता है।

भोजपुरी भाषा का अध्ययन

इस देश मे आधुनिक इण्डो-आर्यन भाषाओ के वैज्ञानिक अध्ययन का इतिहास कुछ बहुत पुराना नहीं है। आज से लगभग सौ वर्ष पूर्व डॉ० सर रामकृष्ण भाण्डारकर और डॉ० बीम्स के अनुसन्धानो से इसका श्रीगणेश होता है। भोजपुरी के सम्बन्ध मे सर्वप्रथम अनुसन्धानकर्ता डॉ० बीम्स थे। इन्होने 'नोट्स ऑन दि भोजपुरी डाइलेक्ट ऑफ हिन्दी स्पोकेन इन वेस्टर्न बिहार' शीर्षक अपने एक लेख मे इसका वैज्ञानिक विश्लेषण किया था।[1] जे० आर० रीड नामक विद्वान् ने भी अपने 'नोट्स ऑन दि डाइलेक्ट करेण्ट इन आजमगढ' शीर्षक लेख में भोजपुरी भाषा के व्याकरण पर प्रचुर प्रकाश डाला था।[2] सन् १८८० ई० मे डॉ० ए० एफ़० रुडाल्फ हार्नली ने अपना सुप्रसिद्ध व्याकरण-ग्रन्थ प्रकाशित किया, जिसमे पूर्वी हिन्दी के अन्तर्गत भोजपुरी व्याकरण की बहु-मूल्य सामग्री उपस्थित की गई है।[3] डॉ० हार्नली ने बनारस की पश्चिमी भोजपुरी को पूर्वी हिन्दी का नाम दिया है। भाषा-शास्त्र की दृष्टि से

१ जनरल ऑफ दि रायल एशियाटिक सोसाइटी, भाग ३ (१८६८ ई०), पृ० ४८३–५०८।

२ सेटेलमेण्ट रिपोर्ट फॉर १८७७, परिशिष्ट नं० २।

३. कम्पेरेटिव ग्रामर ऑफ दि गौड़ियन लैंग्वेजेज।

हार्नली के इस ग्रन्थ 'कम्पेरेटिव ग्रामर ऑफ दि गौडियन लैंग्वेजेज' का महत्त्व बहुत अधिक है, क्योकि यह ऐतिहासिक तथा तुलनात्मक दोनो शैलियो को दृष्टि मे रखकर लिखा गया है।

सुप्रसिद्ध भाषा-शास्त्री डॉ० सर जार्ज ग्रियर्सन ने भोजपुरी भाषा और साहित्य के सम्बन्ध मे बडा ही शोधपूर्ण कार्य किया है। भोजपुरी साहित्य-सम्बन्धी इनके कार्यों का उल्लेख यथास्थान किया जायगा। इस विद्वान् ने भोजपुरी-भाषा के सम्बन्ध मे भी प्रशसनीय कार्य किया है। इन्होने 'लिंग्विस्टिक सर्वे ऑफ़ इण्डिया' नामक विशालकाय ग्रन्थ का सम्पादन किया है, जो कई भागो मे प्रकाशित हुआ है।[1] इसमे भारतवर्ष की सभी भाषाओं तथा उनकी विभिन्न बोलियो का साङ्गोपाङ्ग विवेचन है। इसी ग्रन्थ के भाग ५ खण्ड २ मे इन्होने भोजपुरी भाषा-सम्बन्धी प्रचुर सामग्री उपस्थित की है। इस ग्रन्थ मे भोजपुरी नामकरण का कारण, क्षेत्र-विस्तार, भाषाभाषियों की सख्या तथा इसकी विभिन्न बोलियो और उनके व्याकरण आदि विषयो का विवेचन बडी प्रामाणिक रीति से किया गया है। साथ ही इस भाषा की विभिन्न बोलियों के उदाहरण उनकी विशेषताओं को स्पष्ट करते हुए दिये गए हैं। इस प्रकार इस ग्रन्थ मे भोजपुरी भाषा-सम्बन्धी बहुत-सी सामग्री उपलब्ध है। डॉ० ग्रियर्सन की दूसरी पुस्तक है 'सेवेन ग्रामर्स ऑफ़ दि डाइलेक्ट्स एण्ड सब-डायलेक्ट्स ऑफ दि बिहारी लैंग्वेज'। इस ग्रन्थ मे भोजपुरी भाषा का व्याकरण विस्तृत रूप से दिया गया है। इन्होने अपने 'बिहार पीजेण्ट लाइफ' नामक तीसरे ग्रन्थ मे विभिन्न ग्रामीण वस्तुओं के नाम के रूप मे हजारो भोजपुरी शब्दो का सग्रह किया है। फैलेन की 'न्यू हिन्दुस्तानी-इङ्गलिश डिक्शनरी' (जो सन् १८७६ ई० मे प्रकाशित हुई थी) मे भोजपुरी के शब्दो, खेती के गीतों, मुहावरो और कहावतो का अच्छा सग्रह उपलब्ध होता है। परन्तु इन विद्वानो का कार्य प्रशसनीय होने पर भी सर्वाङ्गीण नहीं है।

---

१. भारत सरकार द्वारा प्रकाशित।

भोजपुरी भाषा-सम्बन्धी सर्वाङ्गीण गवेषणा करने का श्रेय प्रयाग विश्वविद्यालय के हिन्दी के प्रोफेसर डॉ० उदयनारायण जी तिवारी एम० ए०, डि० लिट्० को प्राप्त है। इन्होंने इस भाषा के समस्त अंगो पर अपनी 'ओरिजन एण्ड डेवलेपमेण्ट आफ भोजपुरी' शीर्षक थीसिस मे वैज्ञानिक पद्धति से विवेचन प्रस्तुत किया है।[1] डॉ० तिवारी का भोजपुरी भाषा-सम्बन्धी दूसरा ग्रन्थ बिहार राष्ट्रभाषा परिषद्, पटना से प्रकाशित हो रहा है, जिसमे उन्होंने भोजपुरी भाषा तथा इसके व्याकरण की विद्वत्तापूर्ण मीमासा प्रस्तुत की है तथा मैथिली और मगही से इसकी तुलना भी की है।

इस पुस्तक के लेखक ने भी अपनी 'भोजपुरी ग्राम-गीत' (भाग १) पुस्तक के अन्त मे कुछ भोजपुरी शब्दो का सग्रह उपस्थित किया है तथा 'भोजपुरी ग्राम-गीत' (भाग २) के अन्त मे दी गई टिप्पणियो मे मैंने भाषा-शास्त्र-सम्बन्धी अनेक शब्दो की निरुक्ति भी बतलाई है।[2] श्री लालजी सिह ने प्रयाग से प्रकाशित 'हिन्दुस्तानी' पत्रिका मे भोजपुरी भाषा का सक्षिप्त व्याकरण प्रस्तुत किया है।[3]

भोजपुरी भाषा का विस्तार

भोजपुरी भाषा का विस्तार लगभग पचास हजार वर्गमील मे है। इसकी सीमा किसी एक प्रान्त की राजनीतिक सीमा से सम्बद्ध नही है। भोजपुरी भाषा के प्रधान-क्षेत्र उत्तर-प्रदेश के पूर्वी जिले और बिहार-राज्य के पश्चिमी जिले हैं। परन्तु इन जिलो के अतिरिक्त भी यह भाषा कहीं-कहीं बोली जाती है।

---

१. यह थीसिस अभी अप्रकाशित है।

२ ये दोनो पुस्तकें हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग से प्रकाशित हो चुकी हैं।

३ 'हिन्दुस्तानी' पत्रिका भाग १६, अक २, पृ० १२०-४४।

गंगा नदी से, उत्तर मे इस भाषा की सीमा मुजफ्फरपुर जिले के पश्चिमी भाग की मैथिली है। फिर इस नदी के दक्षिण मे इसकी सीमा गया और हजारीबाग जिले की मगही बोली से मिल जाती है। वहॉ से यह सीमान्त-रेखा दक्षिण-पूर्व की ओर हजारीबाग की मगही के उत्तर-उत्तर घूमकर सम्पूर्ण रॉची पठार और पलामू एव रॉची जिले के अधिकाश भागो मे फैल जाती है। दक्षिण की ओर यह सिहभूमि की उड़िया, गगपुर स्टेट की तद्देशीय भाषा से परिसीमित होती है। यहॉ से भोजपुरी की सीमा भूतपूर्व जसपुर रियासत के मध्य से होकर रॉची पठार की सरहद के साथ-साथ दक्षिण की ओर जाती है जिससे सरगुजा और पश्चिमी जसपुर की छत्तीसगढ़ी बोली से इसका विभेद होता है। पलामू जिले के पश्चिमी प्रदेश से गुजरने के बाद भोजपुरी भाषा की सीमा उत्तर-प्रदेश के मिर्जापुर जिले मे दक्षिणी भाग मे फैलकर गॅगा तक पहुॅचती है। यहॉ यह गगा के बहाव के साथ-साथ पूर्व की ओर घूमती है और बनारस के निकट पहुॅचकर गंगा पार कर जाती है। इस प्रकार मिर्जापुर जिले के गागेय प्रदेश के केवल अल्प भाग मे ही इसका प्रचार है। मिर्जापुर के दक्षिण मे छत्तीसगढी से इसकी भेट होती है परन्तु उस जिले के पश्चिमी भाग के साथ-साथ उत्तर की ओर घूमने पर इसकी सीमा पश्चिम मे पहले बघेलखण्ड की बघेली और फिर अवध की अवधी से जा लगती है।

गगा को पार करके भोजपुरी की सीमा फैजाबाद के जिले मे, सरयू-नदी के निकट टॉडा तक सीधे उत्तर की ओर चली जाती है। इस प्रकार इसका विस्तार बनारस जिले की पश्चिमी सीमा के साथ-साथ, जौनपुर जिले के बीचो-बीच और आजमगढ जिले के पश्चिमीय भाग के साथ-साथ फैजाबाद जिले के आर-पार तक फैला हुआ है। फैजाबाद जिले की टॉडा तहसील मे इसका विस्तार सरयू नदी के साथ-साथ पश्चिम की ओर घूमता है और तब उत्तर की ओर हिमालय के नीचे की श्रेणियो तक बस्ती जिले को अपने मे शामिल कर लेता है। इस विस्तृत भू-भाग

के अतिरिक्त भोजपुरी, थारू नामक जगली जातियो द्वारा—जो गोडा, तथा बहराइच के जिलो मे बसती है—मातृभाषा के रूप मे व्यवहृत की जाती है।[1]

भोजपुरी का अन्य बिहारी भाषाओ से पार्थक्य

यह पहले कहा जा चुका हैं कि बिहारी भाषा के अन्तर्गत तीन भाषाओ का समावेश होता है (१) मैथिली, (२) मगही और (३) भोजपुरी। परन्तु प्रथम दोनो भाषाओ मैथिली और मगही—का आपस मे इतना अधिक साम्य है और भोजपुरी से इतना अधिक वैषम्य है कि बिहारी भाषा को दो भागो मे ही विभक्त करना अधिक उचित प्रतीत होता है—(१) पूर्वी-बिहारी—जो मैथिली और मगही के भेद से द्विविध मानी जाती है और (२) पश्चिमी बिहारी अर्थात् भोजपुरी। इन दोनो मे उच्चारण सम्बन्धी तथा रूपगत अनेक भेद दिखाई पडते है। मैथिली मे विशेषत. और मगही मे सामान्यतः 'अकार' का उच्चारण बॅगला के उच्चारण से मिलता-जुलता है, जिसमे 'अ' की ध्वनि ओकार के समान मुँह को गोलाकार बनाकर की जाती है। परन्तु भोजपुरी मे अकार का उच्चारण पश्चिमी हिन्दी के समान नितान्त सुस्पष्ट 'अकार' ही होता है। भोजपुरी मे 'अकार' की एक विचित्र ध्वनि है जो 'हवे' (है) शब्द मे वर्तमान है। यह कुछ विचित्र ध्वनि है और प्राय 'औकार' के उच्चारण के समान मुँह को अधिक गोल बनाने पर उच्चरित होती है।

---

१. भोजपुरी भाषा के विस्तृत विवेचन के लिए देखिए—

(क) डॉ० ग्रियर्सन—लि० स० ह० भाग ५, खण्ड २।

(ख) डॉ० उदयनारायण तिवारी—'दि ओरिजिन एण्ड डेवलपमेण्ट ऑफ भोजपुरी', (अप्रकाशित) पृ० २४-२६।

भोजपुरी के क्षेत्र-विस्तार के सम्बन्ध में डॉ० तिवारी का मत डॉ० ग्रियर्सन के मत से थोड़ा भिन्न है।

मैथिली और मगही मे आदर-सूचन के लिए मध्यम पुरुष मे 'अपने' शब्द का प्रयोग किया जाता है। परन्तु भोजपुरी मे इसके लिए 'रउरे' शब्द व्यवहृत होता है। यह 'रउरे' तथा 'राउर' (आपका) शब्दो का प्रयोग भोजपुरी की ओर स्पष्ट सकेत करता है। गोस्वामी तुलसीदास जी ने **'मोहि लागत दुख रउरे लागा'** और **'जो राउर अनुशासन पाऊँ'** आदि चौपाइयो मे इन्हीं भोजपुरी शब्दो का प्रयोग किया है। सहायक क्रिया के रूप मे या सत्तार्थक धातु के लिए मैथिली मे 'छई' या 'अछि' का प्रयोग किया जाता है। इसी अर्थ मे मगही मे 'हई' प्रयुक्त होता है परन्तु भोजपुरी मे 'बाटी', 'बाडी' या 'बानी' व्यवहृत होता है। भोजपुरी के इस 'बाटे' या 'बाटी' का उपर्युक्त दोनो बोलियो मे निन्तात अभाव है। 'हइ' (है) क्रिया—जो प्रायः तीनो बोलियो मे समान रूप से पाई जाती है—का रूप भिन्न-भिन्न कालो मे भोजपुरी मे इतना विभिन्न होता है कि इन्हे यह पहचानना भी कठिन है कि ये एक ही क्रिया के विभिन्न रूप हैं। प्रधान क्रिया के रूप मे, भोजपुरी में वर्तमान काल मे 'देखी-ला' (मैं देखता हूँ) का प्रयोग पाया जाता है, जो अपनी विशेषता रखता है। ऐसा प्रयोग अन्य बोलियों मे उपलब्ध नहीं होता।

इन भाषाओ के सज्ञाओ के रूपो मे भी भेद दिखाई पडता है। भोजपुरी मे षष्ठी कारक का प्रत्यय 'के' है, परन्तु मैथिली और मगही मे इसके लिए 'क', 'कर' या 'केर' का प्रयोग किया जाता है। भोजपुरी का व्याकरण यहाँ के निवासियो के जीवन तथा स्वभाव के अनुसार ही व्यावहारिक तथा सीधा है। यह मैथिली भाषा के व्याकरण के अनुसार जटिल तथा कठिन नहीं है।

भोजपुरी भाषा की विभिन्न बोलियाँ

भोजपुरी भाषा की तीन प्रधान बोलियाँ मानी गई हैं—(१) आदर्श भोजपुरी, (२) पश्चिमी भोजपुरी और (३) नागपुरिया। इसके अतिरिक्त इसकी दो अन्य उपबोलियाँ (सब डायलेक्ट्स) भी हैं, जो

'मधेली' और 'थारू' के नाम से प्रसिद्ध हैं। इन बोलियो का वर्णन क्रमशः प्रस्तुत किया जाता है।

इन बोलियो का विस्तार-क्षेत्र

आदर्श भोजपुरी प्रधानतया शाहाबाद, बलिया और गाजीपुर जिले के पूर्वी भाग तथा घाघरा (सरयू) एवं गण्डक के दोआब मे बोली जाती है। यह एक लम्बे भू-भाग मे फैली हुई है। पश्चिमी भोजपुरी—जैसा कि इसके नाम से ही विदित होता है—आजमगढ, जौनपुर, बनारस, गाजीपुर का पश्चिमी भाग तथा मिर्जापुर जिले के उस दक्षिणी भाग मे बोली जाती है जो गंगा से सम्बद्ध है। यह आदर्श भोजपुरी के पश्चिमी भाग मे व्यवहृत होती है। नागपुरिया छोटा नागपुर मे बोली जाती है। मधेसी चम्पारन जिले में प्रयुक्त होती है और 'थारू' नामक बोली गोंडा और बहराइच जिलों के उस भाग मे बोली जाती है जो नेपाल की तराई के निकट हैं। इस प्रकार भोजपुरी की विभिन्न बोलियो तथा उपबोलियो का विस्तार बहुत बडा है।

आदर्श भोजपुरी

आदर्श भोजपुरी शाहाबाद जिले मे स्थित 'भोजपुर' गाॅव के चारों ओर बोली जाती है। अतः इस स्थान के आस-पास बोली जाने वाली भाषा का आदर्श माना जाना स्वाभाविक ही है। आदर्श भोजपुरी एक विस्तृत भू-भाग मे फैली हुई है। इसमे अनेक स्थानीय विशेषताएँ पाई जाती हैं। इसमे भोजपुरी की अन्य बोलियो से सबसे प्रधान एवं स्पष्ट प्रतीयमान पार्थक्य यह है कि जहाॅ शाहाबाद, बलिया और गाजीपुर आदि जिलों मे सहायक क्रिया मे 'ड़' का प्रयोग किया जाता है वहाॅ उत्तरी जिलो में 'ट' का व्यवहार होता है। इस प्रकार उत्तरी आदर्श भोजपुरी मे जहाॅ 'बाटे' का प्रयोग किया जाता है वहाॅ दक्षिणी आदर्श भोजपुरी मे 'बाड़े' प्रयुक्त होता है। उदाहरण के लिए बलिया की आदर्श भोजपुरी में हम

कहते है—'मोहन घर मे बाड़े'। परन्तु गोरखपुर की भोजपुरी मे 'मोहन घर मे बाटे' कहा जाता है। बिहार-राज्य के सारन (छपरा) जिले के उत्तर और मध्य मे क्रिया के भूतकाल का एक विचित्र रूप पाया जाता है जिसमे 'ल' के स्थान पर 'उ' जोड़ा जाता है। परन्तु यह बात अन्यत्र नही पाई जाती। उत्तरी गोरखपुर तथा शाहाबाद की भाषाओ मे अन्तर अवश्य है, परन्तु विशेष नहीं। पश्चिमी गोरखपुर और बस्ती जिले की भाषा मे आदर्श भोजपुरी से थोडा अन्तर अवश्य है किबहुना, पूर्वी गोरखपुर—आधुनिक देवरिया जिला—और पश्चिमी गोरखपुर की भाषा मे भी अन्तर है। इसका भेद वहाँ की बोली सुनने पर तत्काल ही ज्ञात हो सकता है। पूर्वी गोरखपुर की भाषा को 'गोरखपुरिया' कहते है और पश्चिमी गोरखपुर तथा बस्ती जिले की भाषा को 'सरवरिया' नाम दिया गया है।

'सरवरिया' शब्द 'सरुवार' या 'सरुआर' शब्द से निकला हुआ है जो 'सरयूपार' का अपभ्र श है। सरयूपार शब्द का अर्थ है वह प्रदेश, जो सरयू अर्थात् घाघरा के उस पार हो। इस प्रकार इस प्रदेश के अन्तर्गत बहराइच, गोडा, बस्ती, गोरखपुर, देवरिया एव सारन—ये सभी जिले आते है। परन्तु स्थानीय परम्परा के अनुसार आजकल 'सरू-आर' उसी प्रदेश को कहते हैं जो फैजाबाद जिले मे स्थित अयोध्या से लेकर देवरिया जिले के मझौली राज्य तक फैला हुआ है।

भोजपुरी भाषा की 'सरवरिया' बोली सारे बस्ती जिले मे और गोरखपुर जिले के पश्चिमी भाग मे बोली जाती है। 'सरवरिया' तथा 'गोरखपुरिया' बोलियो मे विशेषत: सज्ञा शब्दो के प्रयोग मे भिन्नता पाई जाती है।

उत्तर प्रदेश के बलिया तथा बिहार के सारन (छपरा)—इन दोनो जिलो मे आदर्श भोजपुरी बोली जाती है परन्तु कुछ शब्दो के उच्चारण में दोनो मे अन्तर उपलब्ध होता है। बलिया या शाहाबाद के लोग 'ड़' का उच्चारण शुद्ध रूप मे 'ड़' ही करते हैं। परन्तु सारन जिले के

निवासी 'ड़' का उच्चारण 'र' करते हैं। उदाहरण के लिए जहाँ बलिया जिले के रहने वाले 'घोड़ा गाडी आवत बा' कहते हैं वहाँ छपरहिया लोग 'घोरा-गारी आवत बा' बोलते हैं। इस प्रकार आदर्श भोजपुरी मे भी स्थान विशेष के कारण थोड़ा-बहुत अन्तर दिखाई पड़ता है। बलिया जिले मे प्रचलित आदर्श भोजपुरी का एक उदाहरण यहाँ प्रस्तुत किया जाता है, जिसे ध्यानपूर्वक पढने से इस बोली की विशेषताएँ स्पष्ट रूप से ज्ञात हो सकती है :[1]

"कपिलदेव आजु हम तोहराके ढेर दिन पर देखत बानीं। अतना दिन तू काहाँ रहला हा। जब तब हम तोहरा बारे में तोहरा गाँव के लोगन से पूछत रहली हाँ, मगर केहू हाल साफ ना बतावत रहल हा। अब कह तोहरा घर के सभ बेकति अच्छी तरे बानू ?

जी जोध भइया तू का पूछत बाड। जब हमरा हाल के सुनब त तहरो दु:ख बेआपी ओ आँखिन में से लोर गिरावे लगब। जब हम एठाँ से घरे गइली तब से गिरहती के काम में बझली। दोसर केहू हमरा घर में अहसन नइखे जेकरा से हमके एको लेहजा के आराम मिलो। काहे से कि हमरा बाप अँखिये जबाब दे दिहलिस ओ हमरा जेठ जना भाई हमरा पहुँचला का पहिले ही परदेस चलि गइले। अवर तबसे एको चिठियो ना भेजले हा। हमार काकाजी अपना लरिका-बाला समेत अलगे रहें ले। एही सब ओजह से हम राति-दिन फिकिरि ओ तरदुत से पिसाइल रहीले। महराज के तहसीलदार मालगुजारी खातिर दुइ पियादा तनात कइले बाड़े। मामा से रुपया मंगली त उ साफे इनकार कइले। खीसा ह कि—'घर के मारल बन में गइलीं

बन में लागल आगि।
बन बेचारा क्या करे
जब करम में लागल आगि॥"

---

१. ग्रियर्सन—'लिंग्विस्टिक सर्वे ऑफ इण्डिया', भाग ५, खण्ड २, पृ० २१०।

पश्चिमी भोजपुरी

पश्चिमी भोजपुरी फैजाबाद, जौनपुर, आजमगढ, बनारस, गाजीपुर जिले के पश्चिमी भाग और मिर्जापुर जिले के मध्य भाग मे बोली जाती है। जैसा कि पहले कहा जा चुका है कि पश्चिमी भोजपुरी इण्डो-आर्यन भाषा-परिवार के पूर्वी समुदाय की सबसे पश्चिमी सीमान्त बोली है, जो अवधी आदि से कुछ समानता रखती है।[1] पश्चिमी भोजपुरी के व्याकरण का विस्तृत वर्णन जे० आर० रीड ने प्रस्तुत किया है, परन्तु यह बहुमूल्य सामग्री कठिनाई से उपलब्ध सेटेलमेण्ट (बन्दोबस्त) रिपोर्ट की फ़ाइलो मे दबी पडी है।[2] डॉ० हार्नली ने अपने सुप्रसिद्ध व्याकरण मे 'पूर्वी हिन्दी' के नाम से इस बोली का प्रामाणिक तथा विद्वत्तापूर्ण व्याकरण लिखा है। इस प्रकार भोजपुरी की इस बोली के सम्बन्ध मे प्रचुर सामग्री उपलब्ध होती है।[3]

आदर्श भोजपुरी और पश्चिमी भोजपुरी मे अन्तर

आदर्श भोजपुरी और पश्चिमी भोजपुरी मे बहुत अधिक अन्तर है। सम्भवतः आदर्श भोजपुरी का अन्य बोलियो से इतना अधिक पार्थक्य नहीं है जितना पश्चिमी भोजपुरी से। पश्चिमी भोजपुरी मे करण-कारक के लिए क्रिया के आगे 'अन' प्रत्यय का प्रयोग दीख पड़ता है, जो आदर्श

---

१ Western Bhojpuri is, in fact, the most western outpost of the Eastern group of the Indo-Aryan Family of languages, and possesses some of the features of its cousins to its West.
'लिंग्विस्टिक सर्वे ऑफ इण्डिया', भाग १, खण्ड २, पृष्ठ २४८।

२. जे० आर० रीड—रिपोर्ट ऑन दि सेटेलमेण्ट ऑपरेशन इन दि डिस्ट्रिक्ट ऑफ़ आज़मगढ़, परिशिष्ट २ तथा ३ (इलाहाबाद १८८१)।

३. ए० एफ० आर० हार्नली—ए कम्परेटिव ग्रामर ऑफ़ दि गौडियन लैंग्वेज़ेज (लण्डन १८८०)।

भोजपुरी मे बिलकुल ही नही है। पश्चिमी भोजपुरी मे आदर-सूचक के लिए 'तुँह' का प्रयोग होता है परन्तु आदर्श भोजपुरी मे इसके लिए 'रउरा' शब्द का प्रयोग किया जाता है। दोनो बोलियो मे सहायक क्रिया के दो रूप पाए जाते है—बानी और हवीं। परन्तु पश्चिमी भोजपुरी मे हवी का रूप 'हौई' पाया जाता है।

उच्चारण की विशेषता मे भी अनेक प्रभेद दृष्टिगोचर होते है। बलिया जिले मे उत्तम पुरुष के रूपो के साथ कुछ अनुस्वार-सा मिला रहता है। अतः उसके उच्चारण के लिए नाक की सहायता अनिवार्य रूप से ली जाती है। परन्तु पश्चिमी भोजपुरी मे अनुनासिक का नाम तक नही होता। बलिया जिले के लोग 'मैने काम किया' इसके लिए 'हम काम कइलीं' ऐसा बोलते हैं, जो सानुनासिक प्रयोग है। परन्तु पश्चिमी भोजपुरी बोलने वाले बनारसी लोग कहेगे 'हम काम कइली'। उच्चारण का यह भेद स्पष्ट रूप से प्रत्येक व्यक्ति को मालूम हो सकता है। अन्य पुरुष के बहुवचन के रूप मे भी अन्तर पडता है।

सज्ञा के रूपो मे भी एक विशेषता है। जहाँ आदर्श भोजपुरी मे, सम्बन्धकारक मे, 'के' का प्रयोग किया जाता है वहाँ पश्चिमी भोजपुरी मे 'का' या 'कई' प्रयुक्त होता है। 'के' का परिवर्तित रूप तो 'का' बन जाता है परन्तु 'क' का 'के' होता है।

सम्प्रदान कारक का परसर्ग (प्रत्यय) इन दोनों बोलियो में भिन्न-भिन्न पाया जाता है। आदर्श भोजपुरी मे सम्प्रदान कारक का प्रत्यय 'लागि' है, परन्तु बनारस की पश्चिमी भोजपुरी मे इसके लिए 'के बदे' या 'वास्ते' का प्रयोग होता है। जहाँ आदर्श भोजपुरी मे 'तोहरा लागि उड़बो अकास' बोलते हैं वहाँ बनारसी बोली मे 'किनली है रजा लाल दुसाला तोरे बदे' कहा जाता है। इन दोनो उदाहरणो से यह पार्थक्य स्पष्ट प्रतीत हो जाता है। एक और उदाहरण लीजिए जिससे इन दोनो बोलियो का अन्तर लक्षित होता है .

आदर्श भोजपुरी[1]

तलवा झुरइले कँवल कुम्हलइले,
हंस रोयेला विरह वियोग।
रोवत बाड़ी सरवन के माता,
के काँवर ढोइहे मोर ॥

पश्चिमी भोजपुरी[2]

हम खर मिटाव कैली हा रहिला चबाय के।
भेंवल धरल बा दूध में खाजा तोरे बदे।
अत्तर तू रोज मल के नहाइल कर रजा !
बीसन भरल धइल बा कराब तोरे बदे।
जानीला आज कल में झनाझन चली रजा !
लाठी, लोहांगी, खजर औ बिछुआ तोरे बदे ॥

पश्चिमी भोजपुरी मे खडी बोली हिन्दी के समान विशेषण विशेष्य के लिग, वचन और कारक के अनुसार बदलता रहता है। परन्तु आदर्श भोजपुरी मे ऐसी बात नहीं पाई जाती।

इस प्रकार नागपुरिया, मधेसी, सरवरिया और थरुई आदि का परस्पर विभेद उतना महत्त्वपूर्ण नहीं है जितना आदर्श भोजपुरी और पश्चिमी भोजपुरी का है। बलिया जिले की बोली तथा बनारस की बोली—जो दोनो की प्रतिनिधि है—मे उच्चारण-सम्बन्धी तथा रूपगत इतनी विभिन्नता है कि एक बार सुनने पर ही भेद स्पष्ट मालूम पड जाता है। बलिया तथा आरा की आदर्श भोजपुरी का उदाहरण पीछे दिया जा चुका है। यहाँ बनारस जिले मे बोली जाने वाली पश्चिमी भोजपुरी का नमूना प्रस्तुत किया जाता है:[3]

१. डा० कृष्णदेव उपाध्याय—'भोजपुरी लोक-गीत' भाग १
२ तेग़ अली—बदमाश दर्पण।
३. बनारसी बोली के विशेष विवरण के लिए देखिए वाचस्पति उपाध्याय —'नागरी प्रचारिणी पत्रिका' में प्रकाशित 'बनारसी बोली' लेख।

"एक आदमी के दुइठे बेटवा रहलन। ओ में से छोटका अपने बाप से कहलस ए बाबू ! जौन कुछ माल-असबाब हमारे बखरा में पड़े तौन हमके दे द.। तब ऊ आपन कमाई दूनो के बाँट दिहलेस। थोरिकै दिनके बितले लहुर का बेटवा सब माल समेट के बड़ी दूर परदेस चल गएल और उहाँ सब धन लुचपन में फूँक दिहलेस। जब सब गवाँय चुकल तब ओहि देस मे बड़ा काल पडल।"

नागपुरिया

भोजपुरी की ही एक बोली नागपुरिया है, जो बिहार राज्य के छोटा नागपुर प्रदेश मे बोली जाती है। इस पर छत्तीसगढी बोली का प्रचुर प्रभाव पड़ा हुआ है। नागपुरिया को 'सदान' या 'सद्री' के नाम से भी पुकारते हैं। मुण्डा जाति के लोग इसे 'दिक्कु काजी' कहते है। यहाँ की प्रादेशिक भाषा के 'सद्री' शब्द का अर्थ 'बसे हुए लोगो' से है। अतः इस भाषा के 'सद्री' नामकरण का कारण यही जान पडता है कि यह एक स्थान पर बसे हुए लोगो की भाषा है, खानाबदोशो की नही।

रेवेरेण्ड इ० एच० ह्विटली ने इस बोली का बडा ही पाण्डित्य पूर्ण तथा प्रामाणिक व्याकरण लिखा है।[1] नागपुरिया बोली आदर्श भोज-पुरी से व्याकरण-सम्बन्धी अनेक बातो मे पार्थक्य रखती है। जैसा कि पहले कहा गया है इस बोली पर छत्तीसगढ़ी का बहुत प्रभाव पडा है। नागपुरिया के अनेक सज्ञा-शब्द और धातु-रूप छत्तीसगढी से लिये गए हैं। इस बोली मे सज्ञा मे निश्चयात्मकता लाने के लिए 'हर' जोडा जाता है तथा किसी सज्ञा का बहुवचन बनाने के लिए उसमे 'मन' प्रत्यय जोड़ दिया जाता है। परन्तु यह बात आदर्श भोजपुरी मे नहीं पाई जाती। इसी प्रकार दोनो बोलियो के पारस्परिक विभेद के अनेक

---

१ रेवरेण्ड ई० एच० ह्विटली—नोट्स आन दि गनवारी डाइलेक्ट आफ लोहरदगा—छोटा नागपुर। कलकत्ता १८९६ ई०।

उदाहरण दिए जा सकते हैं।[१] अभी हाल ही मे रोमन कैथोलिक पादरी श्री शान्ति पीटर 'नवरगी' ने 'सदानी भाषा का व्याकरण तथा उसका साहित्य' नामक ग्रन्थ लिखा है जिसमे उन्होने भोजपुरी की सदानी बोली के व्याकरण का वर्णन किया है। परन्तु अभी तक यह पुस्तक अप्रकाशित है।[२]

मधेसी

'मधेसी' शब्द सस्कृत के मध्य प्रदेश से निकला है जिसका अर्थ है बीच का देश। चूँकि यह बोली तिरहुत की मैथिली बोली और गोरखपुर की भोजपुरी के बीच वाले स्थानों में बोली जाती है अतः इसका नाम मधेसी—अर्थात् वह बोली, जो इन दोनो स्थानो के बीच मे बोली जाय—पड गया है। मधेसी बिहार राज्य के चम्पारन जिले मे बोली जाती है। यह प्रायः कैथी अक्षरों मे लिखी जाती है। मैथिली से इसमे अनेक बातो मे समानता पाई जाती है।

थारू

नेपाल की तराई मे जो 'थारू' जाति के लोग बसते है उनकी अपनी कोई भाषा नही है। जहाँ कही भी वे पाए जाते हैं वहाँ उन्होने अपने आर्य पडोसियो की भाषा को पूर्ण रूप से अपना लिया है। ये थारू लोग उत्तर प्रदेश के बहराइच जिले से लेकर बिहार राज्य के चम्पारन जिले तक पाये जाते हैं। ये लोग भोजपुरी की विकृत रूप वाली बोली को बोलते हैं। यह एक विशेष उल्लेखनीय बात है कि गोण्डा और बहराइच जिले के थारू लोग 'भोजपुरी' बोली बोलते है जब कि वहाँ की भाषा पूर्वी हिन्दी है। हागसन (Haegson) ने अपने एक लेख में इस बोली का बडा ही सुन्दर विवरण उपस्थित किया है।[३]

---

१. लिग्विस्टिक सर्वे आफ इण्डिया', भाग ५, खण्ड २, पृ० २७७-२८२०

२. डा० उदयनारायण तिवारी—'जनपद', खण्ड १, भाग १, पृ० ७७

३. हागसन—जरनल आफ दि एशियाटिक सोसाइटी आफ बंगाल, भाग २६ (१८५७), पृ० ३१७

यह बात ध्यान मे रखने योग्य है कि मधेसी और थारू भोजपुरी भाषा की उपबोलियाँ हैं। भोजपुरी की प्रधान बोलियाँ तीन ही–आदर्श भोजपुरी, पश्चिमी भोजपुरी और नागपुरिया—हैं जिनका पहले उल्लेख किया जा चुका है।

: ३ :

सन्त साहित्य

भोजपुरी साहित्य का क्रमबद्ध इतिहास प्रस्तुत करना बडा ही कठिन कार्य है। इस साहित्य के सम्बन्ध मे सबसे बडी कठिनाई यह है कि यह प्रधानतया मौखिक रूप में ही पाया जाता है। इसमे सन्देह नही कि अनेक सन्त कवियो ने इस भाषा मे काव्य-रचना की है, फिर भी इसका अधिकाश साहित्य लिखित की अपेक्षा मौखिक ही अधिक है। गॉवो मे सोहर तथा जतसार गाती हुई स्त्रियो के कलकण्ठ में, बिरहा गाने वाले अहीरो के वीर स्वर मे एव सारंगी बजाकर अपनी उदर-पूर्ति की चिन्ता मे सलग्न, भिक्षा का आयोजन करने वाले जोगियो तथा साधुओ के सरस एव मधुर स्वरो मे इस भाषा का साहित्य छिपा पडा है। भोजपुरी का यह मौखिक साहित्य इतना विस्तृत और विशाल है कि यदि इसका संग्रह किया जाय, तो अमूल्य साहित्य की सामग्री उपलब्ध हो सकती है।

भोजपुरी मे आजकल जो साहित्य उपलब्ध होता है, उसमे कुछ तो सन्तो द्वारा लिखित ग्रन्थ है, कुछ लोक-गीतो के सग्रह है और कुछ ऐसे छोटे-छोटे नाटक और गीत है, जिनमे जनता के दैनिक जीवन और समाज का चित्रण किया गया है। ऐसी पुस्तको मे 'बिदेसिया नाटक',

'मेला घुमनी' और 'गगा-नहवनी' आदि मुख्य है। यद्यपि इन छोटी-छोटी पुस्तिकाओ का साहित्यिक दृष्टि से अधिक मूल्य नही है, फिर भी भोजपुरी भाषा के नमूने के रूप मे इसका महत्त्व कुछ कम नही है।

कुछ विद्वानो ने यह मत प्रकट किया है कि भोजपुरी मे कुछ साहित्य है ही नही। डॉ० हार्नली ने अपने व्याकरण मे लिखा है कि भोजपुरी मे कोई उल्लेखनीय साहित्य नही पाया जाता।[1] भाषा-शास्त्र के सुप्रसिद्ध विद्वान् डॉ० ग्रियर्सन ने लिखा है कि भोजपुरी का शायद ही कुछ साहित्य हो। भोजपुरी प्रान्त मे सुप्रसिद्ध लोरिक का महाकाव्य और कुछ गीत इसमे है। इस भाषा मे कुछ पुस्तके भी छपी है।[2] इस साहित्य के सम्बन्ध मे डॉ० सुनीतिकुमार चटर्जी का यह मत है कि कुछ लोक-गीतो और लोक-गाथाओ (बैलेड) के अतिरिक्त—जो बहुत ही सुन्दर है तथा देहातो मे गाए जाते हैं—भोजपुरी मे प्रयत्न पूर्वक किसी साहित्य की सृष्टि नहीं हुई है। इस बोली का सबसे प्राचीन नमूना सन्त कवि कबीर की रचनाओ मे पाया जाता है, जो थोडे-से पद्यो मे ही सीमित है।[3]

---

१ हार्नली—ए कम्परेटिव ग्रामर ऑफ दि गौड़ियन लेग्वेजेज।

२. Bhojpuri has hardly any indigenous literature. A few books have been printed in it ××× Numerous songs are current over the Bhojpuri area, and the National epic of loric, which is also current in the Magahi dialect is everywhere known.

लि० स० इ० भाग ५, खण्ड २, पृ० ४६।

३. Barring the composition of a number of ballads and songs, which are beautiful specimen of folk-literature as any, and which still have a vigorous existence in the country side, there has been no conscious literary effort in Bhojpuria The oldest specimens in this speech that we possess are probably a few poems written by the great religious reformer and mystic teacher of Northern India (Kabir) who flourished in the 15th Century

चटर्जी—ओ० डे० बं० लै० भाग १।

प्रोफेसर बलदेव उपाध्याय एम० ए०, साहित्याचार्य ने इन्हीं उपर्युक्त विद्वानो का समर्थन करते हुए लिखा है कि, "इतना होने पर यह कम दुःख की बात नहीं है कि इसका साहित्य अभी तक समृद्ध रूप में नहीं दीख पड़ता। यह अभी तक लिखित अवस्था मे भी नहीं है, बल्कि जीविका के लिए इधर-उधर भ्रमण करने वाले गायको और अनपढ देहातियो की जिह्वा पर निवास कर रहा है।"[1] भोजपुरी भाषा के विद्वान् डॉ० उदयनारायण तिवारी का इस सम्बन्ध मे यह कथन है कि :

"भोजपुरी मे सबसे बड़ी कमी इसमे प्रकाशित उच्च श्रेणी के साहित्य का अभाव है।[2] ××× भोजपुरियो को अपनी भाषा के प्रति इतना अनुराग होने पर भी यह बडे आश्चर्य की बात है कि इस भाषा की श्रीवृद्धि नही हुई है और प्राचीन काल मे अपनी बहनो—बगाली, मैथिली एव कोशली—के मुकाबले मे इसमे साहित्य-रचना विशेष नहीं हुई है। इसका प्रधान कारण ब्राह्मण पण्डितों का मातृ-भाषा की उपेक्षा करके संस्कृत भाषा के प्रति विशेष अनुराग है।[3]

उपर्युक्त विद्वानो के कथनो मे सत्य का अश अधिक होने पर भी उनका मत सर्वथा समीचीन नहीं कहा जा सकता। भोजपुरी मे अनेक सन्त तथा महात्माओं ने अपनी काव्य-रचना करके इसके भण्डार को भरा है। इनका परिचय तथा विशेष वर्णन यथास्थान किया जायगा। भोजपुरी मे लोक-गीतो के अनेक संग्रह भी प्रकाशित हो गए हैं तथा अनेक नाटको, कहानियो तथा सरस गीतो के संकलन हो चुके हैं। आज-कल भोजपुरी के नवयुवक कविगण इसकी साहित्य-वृद्धि के लिए सतत प्रयास कर रहे हैं। 'भोजपुरी' पत्रिका मे नित नई कहानियाँ और

---

१ लेखक की 'भोजपुरी ग्राम-गीत' (भाग १)।

२. डॉ० उदयनारायण तिवारी—'भोजपुरी और उसका साहित्य'

३. वही।

कविताएँ प्रकाशित हो रही हैं। अतः ऐसी दशा मे यह कहना कि भोजपुरी मे साहित्य का अभाव है, अनुचित प्रतीत होता है।

भोजपुरी साहित्य का इतिहास लिखने मे कठिनाई

भोजपुरी साहित्य का इतिहास प्रस्तुत करने मे सबसे बडी कठिनाई यह है कि इसका अधिकाश साहित्य अभी तक मौखिक रूप मे ही है। भोजपुरी का जो साहित्य लिखित रूप मे विद्यमान है वह स्वल्प है, और प्रधानतया पद्य-रूप में ही उपलब्ध होता है। भोजपुरी के पद्यात्मक साहित्य मे लोक-गीतो की ही प्रधानता है। इन गीतो के न तो रचयिताओ का ही पता चलता है और न इनके रचना-काल का ही। इन लोक-गीतों की कोई प्राचीन प्रति भी उपलब्ध नही होती, जिससे उनके रचना-काल का कुछ पता चल सके।

इन उपर्युक्त कारणो से भोजपुरी साहित्य के क्रमबद्ध, वैज्ञानिक इतिहास को लिखने मे अनेक कठिनाइयाँ उपस्थित होती हैं। फिर भी अगले पृष्ठो मे भोजपुरी साहित्य का सक्षिप्त विवरण प्रस्तुत करने का प्रयास किया जा रहा है। इस प्रसग मे यहाँ यह लिखना अनुपयुक्त न होगा कि भोजपुरी साहित्य के इतिहास को विद्वानो के सामने उपस्थित करने का यह सर्वप्रथम प्रयास है। यहाँ जो कुछ सामग्री प्रस्तुत की जा रही है, वह सर्वथा मौलिक है।

आजकल भोजपुरी साहित्य-सम्बन्धी जो सामग्री उपलब्ध है, उसे प्रधानतया चार भागो मे विभक्त किया जा सकता है—

(१) सन्त-साहित्य
(२) लोक-साहित्य
(३) आधुनिक-साहित्य
(४) प्रकीर्ण लोक-काव्य-सग्रह

लोक-साहित्य को दो भागो मे विभक्त किया जा सकता है—(१) यूरोपीय विद्वानो द्वारा सग्रहीत तथा (२) भारतीय विद्वानो द्वारा

संकलित। इसी प्रकार आधुनिक साहित्य को विवेचन की सुविधाओ के लिए तीन भागो मे विभक्त किया गया है—(१) पद्य, (२) गद्य और (३) नाटक। इनका वर्णन इसी क्रम से आगे किया जायगा।

जिस प्रकार भारतीय दर्शन-शास्त्र के इतिहासकारो ने अद्वैत वेदान्त के सर्वप्रधान आचार्य भगवान् शकराचार्य को मध्य-बिन्दु मानकर इस वेदान्त के इतिहास को पूर्व-शकर-युग, शकर-युग, और पश्चात्-शकर-युग—इन कालो मे विभक्त किया है उसी प्रकार डॉ० ग्रियर्सन को भोजपुरी साहित्य के इतिहास का मध्य-बिन्दु मानकर इस साहित्य को निम्नाकित तीन भागो मे विभक्त किया जा सकता है—

(१) पूर्व ग्रियर्सन-काल
(२) ग्रियर्सन-काल
(३) पश्चात् ग्रियर्सन-काल

इस काल-विभाजन के लिए हमारे पास पर्याप्त कारण भी हैं। भोजपुरी के लोक-गीतो के संग्रह तथा प्रकाशन के सम्बन्ध मे डॉ० ग्रियर्सन ने प्रशसनीय प्रयत्न किया है। आज से लगभग ७०-८० वर्ष पूर्व—जबकि हिन्दी मे लोक-गीतों के सग्रह का अभी श्रीगणेश भी नही हुआ था—डॉ० ग्रियर्सन ने भोजपुरी के अनेक लोक-गीतो को खोजकर इनका संग्रह किया और उनका समुचित रीति से सम्पादन करके अग्रेजी मे इनका अनुवाद भी प्रकाशित किया। इस प्रकार उन्होने सभ्य जगत् का ध्यान इन 'गॅवारू' कहे जाने वाले लोक-गीतो की ओर आकर्षित किया। डॉ० ग्रियर्सन ने अपने 'लिग्विस्टिक सर्वे ऑफ इण्डिया' मे भोजपुरी भाषा का विस्तृत विवेचन प्रस्तुत करके इस प्रदेश के निवासियों की भूरि-भूरि प्रशसा की है। उन्होने केवल स्वय ही लोक-गीतो का सग्रह नही किया, बल्कि अपने समकालीन अन्य अग्रेज सिविलियनो—ग्राउस तथा फ्रेजर आदि—को भी इस कार्य के लिए प्रोत्साहित किया। डॉ० ग्रियर्सन ने भोजपुरी भाषा तथा साहित्य की बहुमूल्य सेवा की है। फिर भी अनेक कारणो से तथा अपनी सुविधा के लिए पूर्वोक्त चार

विभागो के अनुसार ही यहाँ भोजपुरी साहित्य के इतिहास को प्रस्तुत करने का प्रयास किया जाता है।

भोजपुरी साहित्य की प्राचीनता

सबसे प्राचीन सन्त कवि, जिनकी कविता मे भोजपुरी की रचनाएँ उपलब्ध होती है, महात्मा कबीरदास हैं, जिनका प्रादुर्भाव सन् १४८३ ई० मे हुआ था। यद्यपि कबीर की भाषा मिश्रित या खिचड़ी भाषा है जिसमे पंजाबी, राजस्थानी तथा पूर्वी का सम्मिश्रण पाया जाता है फिर भी इससे पूर्वी बोली का ही पुट अधिक उपलब्ध होता है। कबीरदास जी ने स्वयं लिखा है कि मेरी बोली पूरब देश की है और जो धुर पूरब का निवासी है वही मेरी बोली को समझ सकता है—

"**मेरी बोली पूरब की,** ....
...., **जो धुर पूरब का होय ॥**"

पूर्वी बोली से कबीरदास जी का तात्पर्य भोजपुरी भाषा से था, इसमे तनिक भी सन्देह नही है। जहाँ तक इन पक्तियो के लेखक को ज्ञात है लिखित रूप मे भोजपुरी कविता के जो उदाहरण आज उपलब्ध होते है वे सम्भवतः कबीर के पहले के नही मिलते। अन्तरंग प्रमाणो के आधार पर यह निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि भोजपुरी लोक-गीतोकी रचना का काल मुगलो के समय से अधिक प्राचीन नही है। मुगलो का शासन सन् १५२६ ई० से प्रारम्भ होता है। अतः भोजपुरी साहित्य का प्रारम्भ असन्दिग्ध रूप से १५०० ई० के लगभग माना जा सकता है। इस प्रकार भोजपुरी साहित्य का इतिहास १५०० ई० से लेकर आज तक का (१९५७ ई०) अर्थात् लगभग ४५० वर्षों का इतिहास है।

भोजपुरी साहित्य के सम्बन्ध मे यह बात ध्यान देने योग्य है कि राजाश्रय प्राप्त न होने के कारण इस भाषा का उतना विकास नहीं हो सका जितना हिन्दी की अन्य बोलियों का हो सका है। यही कारण है कि इसका इतिहास क्रमबद्ध रूप मे उपलब्ध नहीं होता। अतएव इसके

इतिहास-लेखक को अनेक कठिनाइयो का सामना करना पडता है ।

सिद्धों द्वारा भोजपुरी शब्दो का प्रयोग

भोजपुरी मे अनेक सन्त कवियो ने काव्य की रचना की है । परन्तु सन्त कवियो के पूर्व मे प्रादुर्भूत होने वाले सुप्रसिद्ध चौरासी सिद्धो मे से कुछ ने भोजपुरी के कतिपय शब्दो—विशेषकर क्रियाओ—का प्रयोग अपनी कविता मे किया है। इन सिद्धो की काव्य की भाषा क्या थी इस विषय में बडा विवाद है । विद्वान् लोग अभी इस निर्णय पर नहीं पहुँच सके है कि इनकी भाषा पुरानी बँगला है, हिन्दी है या अन्य कुछ। यदि इनकी काव्य-भाषा की परीक्षा की जाय तो इसमे अनेक भोजपुरी के क्रिया-पद उपलब्ध होते है ।

चौरासी सिद्धो मे सिद्ध भुसुक का नाम बड़ा प्रसिद्ध है । ये बिहार-राज्य के नालन्दा के पास के प्रदेश मे एक क्षत्रिय-वश मे उत्पन्न हुए थे। इनका आविर्भाव-काल नवी शताब्दी का पूर्वार्द्ध है ।[1] इन्होने 'सहजगीति' नामक पुस्तक लिखी है जिसका एक पद्य यह है :

"आजि भुसु बंगाली भइली
णिअ घरिणीं चण्डाली लइली ।"

इस पद्य मे 'भइली' क्रिया स्पष्ट ही भोजपुरी की है । भोजपुरी प्रदेश मे अइली, गइली, खइली क्रिया-पदो का प्रयोग निरन्तर होता है और सर्वसाधारण इसे समझते और बोलते है। महापण्डित राहुल साकृत्यायन ने इस 'भइली' शब्द के विषय मे लिखा है[2] कि "फिर 'भइली' शब्द बॅगला मे कहाँ व्यवहृत होता है। किन्तु वह काशी से मगह तक आज भी प्रचलित है।"

काशी से पूर्व और पटना के पश्चिम मे जो भाषा बोली जाती है वह भोजपुरी है। अतः राहुल साकृत्यायन के मतानुसार भी 'भइली'

१. राहुल सांकृत्यायन—'पुरातत्त्व निबन्धावली', पृ० १७५-१७६
२. वही, पृ० १७७ का फुटनोट

शब्द के भोजपुरी होने मे तनिक भी सन्देह नही है। इसी प्रकार सिद्ध डोम्भिया तथा सिद्ध कुक्कुरिया ने भी अपनी कविता मे भोजपुरी की क्रियाओ का व्यवहार किया है।

राहुल जी ने इन सिद्धो की भाषा को मगही हिन्दी का नाम दिया है।[1] मगही और भोजपुरी की सीमाएँ एक-दूसरे से मिलती-जुलती है। अतः इसमे कोई आश्चर्य की बात नहीं कि मगही में कविता लिखने वाले सिद्धों ने भोजपुरी के क्रिया-पदो का प्रयोग किया हो।

जायसी और तुलसीदास द्वारा प्रयोग

हिन्दी के अनेक कवियो ने भोजपुरी भाषा के शब्दो का प्रचुर मात्रा मे प्रयोग किया है। ऐसे कवियो मे जायसी और तुलसी का नाम प्रसिद्ध है। जायसी जायस (अवध) के रहने वाले थे। रमते जोगियो और साधुओ के सत्सग मे रहने के कारण इनकी कविता मे भोजपुरी शब्दो का मिलना कुछ आश्चर्यजनक नहीं है। रही तुलसीदास जी की बात। उनके विषय मे यह तो प्रसिद्ध ही है कि उन्होने अपने सुप्रसिद्ध ग्रन्थ 'राम-चरित मानस' और 'विनय पत्रिका' का अधिकाश भाग काशी मे ही लिखा था। काशी भोजपुरी क्षेत्र के ही अन्तर्गत है, अतः तुलसी की "भाखा' मे भोजपुरी का गहरा पुट होना स्वाभाविक ही है।

तुलसी के 'मानस' मे भोजपुरी के अनेक शब्द उपलब्ध होते है। तुलसीदास जी ने अधिकतर भोजपुरी मे संज्ञा-शब्दो का प्रयोग किया है परन्तु जायसी ने सज्ञा-शब्दो के अतिरिक्त क्रिया-पदो को भी अप-नाया है।

जायसी ने अपनी पुस्तक 'पद्मावत' मे अनेक ठेठ भोजपुरी शब्दो का प्रयोग किया है। जब पद्मावती पालकी पर चढकर रतनसेन से मिलने जाती है तो कवि कहता है:

---

१. राहुल सांकृत्यायन—'पुरातत्व निबन्धावली', पृ० १८५।

"साजि सबै चंडोल चलाये,
सुरंग *ओहार* मोति जनु लाये।"

इसमे 'ओहार' शब्द भोजपुरी का है, जिसका अर्थ पालकी का पर्दा होता है। आगे एक स्थान पर जायसी लिखते हैं कि **"का पछिताव आउ जो *पूजी*"** अर्थात् आयु के समाप्त हो जाने पर पश्चात्ताप करना व्यर्थ है। हिन्दी मे 'पूजना' का अर्थ पूजा करना या आदर-सत्कार करना होता है। परन्तु भोजपुरी मे इसका अर्थ समाप्त होना है। इसी अर्थ मे इस शब्द का प्रयोग जायसी ने यहाँ किया है।

तुलसीदास ने 'रामचरित-मानस' मे भोजपुरी शब्दो का प्रयोग प्रचुरता से किया है। परन्तु इसके अतिरिक्त 'कवितावली', 'रामायण' और 'विनय-पत्रिका' मे भी भोजपुरी के कुछ शब्द उपलब्ध होते है। भोजपुरी मे आपके लिए 'रउरे' शब्द का प्रयोग किया जाता है। इसी का सम्बन्ध-कारक का रूप 'राउर' होता है। तुलसीदास ने इन दोनो शब्दों का प्रयोग किया है—

"कहत बचन दुःख *रउरे* लागा"

लक्ष्मण राम से कहते है कि :

"जो *राउर* अनुसासन पाऊँ,
कन्दुक इव ब्रह्माण्ड उठाऊँ"

तुलसीदास ने भोजपुरी के कुछ ठेठ शब्दो का भी प्रयोग किया है। 'गॅव' एक ऐसा ही शब्द है जिसका अर्थ है 'अवसर' या मौका। तुलसी लिखते है :

"जिमि *गॅव* तकइ किरात किसोरी"

इसी प्रकार अन्य उदाहरण भी दिए जा सकते हैं।

सन्त कवि

कबीर—भोजपुरी में कविता करने वाले सन्त कवियो मे कबीर सर्व-प्रथम है। सम्भवतः यह सबसे पहले निर्गुणी सन्त थे जिन्होंने भोजपुरी

मे अपनी कुछ कविताओ की रचना की है। कबीरदास का जन्म काशी मे हुआ था, जो भोजपुरी क्षेत्र के अन्तर्गत है। साधु-सन्तो की सत्सगति में उन्होने इस क्षेत्र मे भ्रमण मे किया था। अतः इनकी कुछ रचनाओ का भोजपुरी मे उपलब्ध होना अस्वाभाविक बात नहीं है। चौरासी सिद्धो की कविता मे कतिपय भोजपुरी शब्दो का प्रयोग ही पाया जाता है, परन्तु सर्वप्रथम कबीर के ग्रन्थो मे ही भोजपुरी कविता उपलब्ध होती है। अतः कबीर को यदि भोजपुरी का आदिकवि माना जाय तो यह कुछ अनुचित न होगा।

सुप्रसिद्ध भाषा-शास्त्री डॉक्टर सुनीतिकुमार चटर्जी ने लिखा है कि भोजपुरी भाषा का सबसे पुराना नमूना कबीर के कतिपय पद्यों मे पाया जाता है। यद्यपि उन्होंने तत्कालीन हिन्दी कवियो की प्रथा के अनुसार साधारणतया ब्रजभाषा और कभी-कभी अवधी में कविता की है, परन्तु उसमें भोजपुरी का पुट यत्र-तत्र लक्षित हो ही जाता है। और जहाँ उन्होने 'अपनी भोजपुरिया' का प्रयोग किया है वहाँ ब्रजभाषा कभी-कभी परिलक्षित हो जाती है।[1]

---

१. The oldest specimens in this speech that we possess are probably a few songs written by the great religious reformer and mystic teacher of Northern India who flourished in the 15th century. Kabir was an inhabitant of the Bhojpuriya tract, but following the practice of the Hindustani poets of the times, be generally used Braj-Bhakha and occassionally Awadhi. His Braj-Bhakha, at times, betrays an eastern—Bhojpuriya form here and there. And when he employs his *own Bhojpuriya dialect*, Braj-Bhakha and western forms show themselves.

चटर्जी—'ओरिजिन एण्ड डेवेलेपमेण्ट आफ़ दि बेङ्गाली लैंग्वेज', भाग १।

कबीर की भाषा के सम्बन्ध मे डॉ० चटर्जी द्वारा प्रयुक्त 'अपनी भोजपुरिया' शब्द ध्यान देने योग्य है। इस उल्लेख से स्पष्ट प्रतीत होता है कि कबीर की अपनी भाषा भोजपुरी ही थी और विशेषकर इसीमे उन्होंने अपनी कविता लिखी थी। जिन प्रान्तो या प्रदेशो मे इनकी कविता का प्रचार हुआ वहाँ के लोगो ने उसमे स्थानीय शब्दो को जोड दिया। इसीलिए कबीर की रचनाओ मे राजस्थानी, ब्रजभाषा, अवधी और भोजपुरी का मिश्रण पाया जाता है। डॉ० चटर्जी ने कबीर की भोजपुरी कविता के उदाहरण में निम्नाकित चार पद्यो को उद्धृत किया है :

"कनवा फगाइ जोगी जटवा बढ़वले
दाढ़ी बढ़ाई जोगी होइ गइले बकरा।
कहही कबीर सुनो भाई साधो
जम दरवजवा बान्धल जइबे पकरा॥१॥
बाबा घर रहलू त बबुई कहवलू
सँइयाँ घर चतुर सेयान।
चेतब घरवा आपन रे॥२॥
का ले जइबो, प्रीतम घर अइबो,
गाँव के लोग जब पूछन लगिहे,
तब हम का रे बतइबो॥३॥
सूतल रहलौं मै नींद भरि हो,
पिया दिहले जगाय।
चरन कँवल के अञ्जन हो,
नैना लेलू लगाय॥४॥"

इन पद्यो के अतिरिक्त कबीर की भोजपुरी कविताओ के अन्य उदाहरण भी दिए जा सकते हैं जिनमें उन्होंने ठेठ भोजपुरी के शब्दों का भी प्रयोग किया है। आगे की कविता[1] लीजिए :

१. 'कबीर साहब की शब्दावली', भाग १, पृ० २३।

"कौन ठगवा नगरिया लूटल हो।
चन्दन खाट के बनल खटोलना,
तापर दुलहिन सूतल हो।।
उठो री सखी मोरी माँग सँवारो,
दुलहा मोसे रूसल हो।
आइ जमराज पलंग चढ़ि बइठे,
नैनन आंसू टूटल हो।
चार जने मिलि खाट उठवले,
चहुँ दिसि धू धू उठल हो।
कहत कबीर सुनो भाई साधो,
जग से नाता छूटल हो।।"

इन उदाहरणों से स्पष्ट प्रतीत होता है कि कबीर की भाषा भोजपुरी है। 'मेरी बोली पूर्व की' यह लिखकर उन्होंने इस बात को स्वयं स्वीकार किया है।[1]

धरमदास—कबीरदास की ही भाँति धरमदास भी एक सन्त कवि थे, जो इन्हींकी परम्परा मे हुए थे। ऐसा कहा जाता है कि वे कबीरदास जी के शिष्य थे और उनके पन्द्रह वर्ष बाद तक जीवित रहे। इस कथन से कबीर के साथ इनका सम्बन्ध प्रमाणित होता है। सन् १६२३ ई० मे बेलबेडियर प्रेस, प्रयाग से 'धरमदास जी की शब्दावली' प्रकाशित हुई थी। इस पुस्तक से धरमदास जी की कविता का एक उदाहरण दिया जाता है :

"मितऊ मड़ैया सूनि करि गैलो।
अपन बलम परदेस निकरि गैलो।
हमरा के कछुओ न गुन देइ गैलो।
जोगिन होइ के मैं बन बन ढूढ़ो।
हमरा के विरह बैराग देइ गैलो।

१ हजारी प्रसाद द्विवेदी—'कबीर', पृ० २७३।

संग की सखी सब पार उतरि गैली,
हम धनि ठाढ़ी अकेली रहि गैली।
धरमदास यह अरज करतु है,
सार शब्द सुमिरन देइ गैलो॥"

उपर्युक्त पद मे क्रियाओ का जो रूप दिखाई पड़ता है वह स्पष्ट ही भोजपुरी का है। इसी प्रकार धरमदास जी की कविता के अन्य उदाहरण भी उपलब्ध होते है। उनकी दूसरी कविता की कुछ पंक्तियाँ दी जाती है जिसमे रहस्यवाद की बाँकी झाँकी हमें देखने को मिलती है :[1]

"कहवाँ से जीव आइल,
कहवाँ समाइल हो॥१॥
कहवाँ कइल मुकाम,
कहाँ लपटाइल हो॥२॥
निरगुन से जीव आइल,
सरगुन समाइल हो॥३॥
कायागढ़ कइल मुकाम,
माया लपटाइल हो॥४॥
एक बूँद से काया,
महल उठावल हो॥५॥
बूँद परे गलि जाय,
पाछे पछितावल हो॥६॥"

शिवनारायण—यह भी एक सन्त कवि थे जिनका जन्म उत्तर-प्रदेश के गाजीपुर जिले के चन्द्रवार नामक गाँव में हुआ था। इन्होने अनेक ग्रन्थो की रचना की है, जो हस्तलिखित रूप में उपलब्ध होते हैं। इनका रचना-काल सन् १७३५ ई० के आस-पास समझना चाहिए।

सन्त कवि शिवनारायण ने अपने ग्रन्थो मे दोहा और चौपाई छन्दो का प्रयोग किया है जिसमे गोस्वामी तुलसीदास जी ने 'रामचरित

१. 'धरमदास जी की शब्दावली', पृ० ६३० शब्द ३।

मानस' की रचना की है। इन्होने प्रधानतया अवधी भाषा मे अपने ग्रन्थों की रचना की है। परन्तु जहॉ इन्होने जलसार (जॉत के गीत) और घॉटो (चैता) लिखा है वहॉ भोजपुरी भाषा का प्रयोग किया है। इनकी कविता का केवल एक उदाहरण यहाँ प्रस्तुत किया जाता है :

"सूतल रहलों नींद भरी गुरु देले हो जगाई।
गुरु के सबद रंग आंजन हो ले लो नयना लगाई,
तब ही से नींदो नाहि आवे हो नाही मन अलसाई,
गुरु के चरन रज सागर हो, नित सबेरे नहाई।
जनम जनम के पातक हो, छन में देहल दहवाई।
पेह्लो में सुमति गवनवां हो, कुमति दिहलो उतारि।
सब्द के मांग सवारों हो, दुरमति दहवाई।
पियलों में प्रेम पियलवा हो, मन गइले बउराई।
आगि लगहु तन जरि जाहु हो मोरा कुछ ना सोहाई।
बइठलों में ऊँची चउरिया हो, जहां जोर न जाई।
'शिवनारायण' गुरु समरथ हो, देखि काल डेराई॥"

धरनीदास—भोजपुरी के सन्त कवियों मे बाबा धरनीदास जी का नाम प्रसिद्ध है। ये बिहार-राज्य (प्रान्त) के सारन जिले के माँझी नामक गॉव के निवासी थे। धार्मिक प्रवृत्ति इनकी बचपन से ही थी। अतः ये अपना अधिकाश समय हरि-भजन मे ही व्यतीत करते थे। ये स्थानीय जमींदार के यहॉ मुन्शी का काम करते थे। एक दिन इन्होने दफ्तर मे काम करते समय ऑफिस के कागज-पत्रो पर एक घड़ा पानी डाल दिया। लोगो द्वारा इसका कारण पूछने पर इन्होने बतलाया कि जगन्नाथपुरी मे भगवान् के वस्त्र मे आग लग गई थी। अतः उसे शीघ्र बुझा देने के लिए इन्होने ऐसा किया था। पता लगाने पर यह घटना सच्ची निकली। इस घटना के पश्चात् इन्हे ससार से इतना अधिक वैराग्य हो गया कि इन्होने नौकरी छोड़ दी और विरक्त हो गए। इन्होने इस घटना की ओर निम्नाकित शब्दो में संकेत किया है :

"राम नाम सुधि आई।
लिखनी अब ना करबि ए भाई।"

अर्थात् मुझे अब राम-नाम का स्मरण हो गया है। अतः मै अब लिखने का काम (मुन्शी का पेशा) नही करूँगा।

तब से ये विरक्त होकर भगवान् के भजन मे ही अपने समय को बिताने लगे थे। इन्होने अपने विरक्त होने का समय 'प्रेम-प्रगास' नामक ग्रन्थ मे सन् १६५६ ई० (१७१३ वि० स०) लिखा है, जिससे पता चलता है कि इनका आविर्भाव-काल सत्रहवी शताब्दी के पूर्वार्ध मे हुआ था। इनके एक पद मे शाहजहाँ तथा उसके पुत्र औरगजेब के नाम का उल्लेख हुआ है जिससे इनके विरक्त होने के समय का निर्णय निश्चित रूप से किया जा सकता है। आपका पद यह है :

"सम्वत सत्रह सौ चलि गयऊ।
तेरह अधिक ताहि पै भयऊ॥
शाहजहाँ छोड़ी दुनियाई।
पसरी औरंगजेब दुहाई॥
सोच-विचारि आतमा जागी।
धरनी धरेऊ भेस बैरागी॥"

इससे पता चलता है कि १७१३ विक्रमी सवत् मे ये वैरागी हो गए थे।

बाबा धरनीदास जी सन्त और कवि दोनो थे। परन्तु कवि की अपेक्षा ये सन्त ही अधिक थे। कविता तो इनके हृदय से निकले हुए भक्तिपूर्ण उद्गारों की वाहन-मात्र थी। इन्होने दो ग्रन्थों की रचना की है—(१) 'शब्द प्रकाश' और (२) 'प्रेम प्रगास'। ये दोनो पुस्तकें माँझी गाँव के पुस्तकालय मे हस्तलिखित रूप मे सुरक्षित हैं। 'प्रेम प्रगास' की एक हस्तलिखित प्रति के अनुसार इस ग्रन्थ को लिपिबद्ध करने की समाप्ति सन् १८७३ ई० मे हुई थी। इसे माँझी के महन्त रामदास जी ने जानकी दासी उर्फ बरता कुँवर के लिए लिखा था। इस पुस्तक की

भाषा भोजपुरी है, जो अवधी से मिली-जुली है। इसमे 'पयार' छन्द का प्रयोग हुआ है, जो बॅगला मे अधिकता से पाया जाता है। एक उदाहरण लीजिए :

"सुमिरु सुमिरु मन सिरजन हार,
जिह्न कैला सुर नर सरग पताल।
रवि ससि अगिनि पवन कहला पानी,
जिआ जन्तु सनि सनि आनि आनि बानी।
गुरु के चरण रज सिरवा चढ़ाई।
जिह्न लेला भव जल बुड़त बचाई॥
देवता पिता बिनवलों कर जोरी।
सेवा लेब मानि अलप बुधि मोरी॥"

धरनीदास जी की कविता का दूसरा उदाहरण 'प्रेम-प्रगास' से यहॉ उद्धृत किया जाता है[1] :

"की सुभ दिना आजु, सखी सुभ दीना ॥१॥
बहुत दिनन्ह पिया बसल बिदेस।
आजु सुनल निजु आवन सँदेस ॥२॥
चित्र चित्र सरिया में लिहल लिखाई।
हिरदय कवल धइलो दियरा लेसाई ॥३॥
प्रेम पलाग तहाँ धइलो बिछाई।
नख सिख सहज सिंगार बनाई ॥४॥
मन सेवकहिं विहु आगु चलाई।
नैन धइल दुई दुअरा बइसाई ॥५॥
धरनी सो धनी पलु पलु अकुलाई।
बिनु पिया जीवन अकारथ जाई ॥६॥"

---

१. इनके विस्तृत जीवन वृत्त तथा कविता के लिए देखिए—'भोजपुरी और उसका साहित्य', डा० उदयनारायण तिवारी।

लक्ष्मी सखी—बाबा लक्ष्मीदास जी एक पहुँचे हुए महात्मा थे। ये लक्ष्मी सखी या लछमी सखी के नाम से अधिक प्रसिद्ध हैं। इनका जन्म बिहार-राज्य के सारन जिले के अमनौर नामक गाँव मे हुआ था। इनका आविर्भाव-काल १६वी शताब्दी का उत्तरार्द्ध है। जैसा कि इनके नाम से विदित होता है ये सखी सम्प्रदाय के अनुयायी थे। इनके पिता का नाम मुन्शी जगमोहन दास था। लक्ष्मी सखी ने एक पद मे अपना परिचय दिया है, जिससे पता चलता है कि सारन जिले के अमनौर नामक स्थान के कायस्थ वश मे इनका जन्म हुआ या। इनका जीवन बड़ा ही सात्विक था। अपने जीवन की गोधूलि मे इन्होने संसार से नाता तोड़कर भगवान् से सम्बन्ध जोड़ा था। बाल-बच्चो से मुँह मोड, कामिनी और काञ्चन को छोड़, इन्होने लौकिक सुखो के प्रति मोह तोड़ दिया था। अपने गाँव अमनौर से थोड़ी दूरी पर 'टेरुआँ' नामक स्थान मे इन्होने अपना आश्रम बनाया था, जहाँ ये सदा रहा करते थे। जीवन के अन्तिम दिनो मे ये भजन बनाकर तथा उन्हे गाकर अपना समय बिताया करते थे। इसी 'टेरुआँ' स्थान मे इनकी ऐहिक लीला समाप्त हुई। 'अमरसीढ़ी' नामक ग्रन्थ मे इन्होने अपना परिचय इस प्रकार दिया है[1] :

"सुनु सखी सुनहु कहब कुछ अऊर।
सारन जिला तखत *अमनऊर* ॥१॥
कायथ बनस में जनमेऊ बऊर।
राम लखन फल फरिगइले दोऊर ॥२॥
जनमभूमि कबों पुजलो गऊर।
मीलि गईले सतगुरु माथे चढ़ल मऊर ॥३॥
जियते मरिगइलीं लडकल ठऊर।
सन्त समाज में चलि गइलीं बऊर ॥४॥

---

१. झूमरा पृ० १०।

सतगुरु बिहले ग्यान के लऊर।
झटपट मरली मे माछर सऊर ॥५॥
पाकल ब्रह्म अगिनि कर भऊर।
खइलों मे साधु सन्त मिलि अऊर ॥६॥
मौजे 'टेरुआँ' में अइलो दऊर।
मिलि जुलि भगत बनावल ठऊर ॥७॥
'लछमी सखी' के सुन्दर पियवा।
आरे तुम लगि मेरी दऊर ॥८॥"

ऊपर के उद्धरण से यह ज्ञात होता है कि लक्ष्मी सखी ने सन्त-समाज मे जाकर सत्सग किया था और सत् गुरु की कृपा से इनको ज्ञान की प्राप्ति हुई थी।

लक्ष्मी सखी के द्वारा रचित चार ग्रन्थो का पता चलता है— (१) 'अमर सीढी', (२) 'अमर कहानी', (३) 'अमर विलास' और 'अमर फराश'। इनमे से प्रथम दो पुस्तके प्रकाशित है, जिन्हे 'टेरुआँ' गॉव के निवासी इनके किसी शिष्य ने इनकी मृत्यु के पश्चात् छपवाया था। परन्तु अन्तिम दो पुस्तके बहुत प्रयत्न करके भी अभी उपलब्ध नही हो सकी है। बहुत सम्भव है कि 'टेरुआँ' गॉव के आश्रम मे इन पुस्तको की हस्तलिखित प्रतियॉ सुरक्षित हों।

लक्ष्मी सखी का सबसे बड़ा, प्रधान तथा प्रसिद्ध ग्रन्थ 'अमर सीढ़ी' है, जो इनके अन्य ग्रन्थो से परिमाण मे भी अधिक है। इस ग्रन्थ मे ३६० पृष्ठ हैं, जिनमे भिन्न-भिन्न रागो मे भगवद्भक्ति के पद गाये गए हैं। कबीर की भॉति इनके पदो मे कहीं तो योग-साधना का उल्लेख मिलता है, तो कहीं रहस्यवाद की झॉकी उपलब्ध होती है। इनकी यह रहस्यमयी उक्ति कितनी सुन्दर है :

"सखी तोरे पियवा देइ लेइ एगो पतिया।
बारहु दियवा जुड़ाइ लेहु हियवा।
समुझि समुझि के बतिया ॥१॥

इहवाँ न केहू साथी ना संघतिया।
कामिनी, कन्त तोरे जोहत बटिया ।।२।।
सोने के खाटी रूपे के पटिया।
करु मज्जन चलु त्रिकुटी के घटिया ।।३।।
ओहि रे घाट पर सुन्दर पियवा,
निरखत रहु दिन रतिया ।।४।।
'लछमी सखी' के सुन्दर पियवा,
सूत रहू लगाई के छतिया ।।५।।"

इस पद मे ईश्वर को पति मानकर उनके साथ प्रेम करने की व्यञ्जना कितनी मधुर बन पडी है। 'लक्ष्मी सखी' सखी-सम्प्रदाय के अनुयायी थे, जिसमे परमात्मा को पति और आत्मा को स्त्री मानकर प्रेम किया जाता है। उपर्युक्त पद मे इसी प्रेम-पद्धति की ओर सकेत किया गया है।

इनका दूसरा ग्रन्थ 'अमर कहानी' है। इसमें मैथिल कोकिल विद्यापति के अनुकरण पर भक्ति के पद गाये गए हैं। 'झूमरा', 'विवाह-गारी' और 'कजली' इनके अन्य छोटे ग्रन्थ हैं। इनके पट्टशिष्य कामता सखी ने 'छुट्टा दोहा' नामक ग्रन्थ लिखा है। इन सभी ग्रन्थो को इनके शिष्य महेशप्रसाद वर्मा ने सन् १६१२ ई० मे छपरा से प्रकाशित किया था।

लक्ष्मी सखी की कविता बडी ही सुन्दर, सरस, मधुर और हृदयस्पर्शी है। इनकी कविता मे भोजपुरी की असली मिठास पाई जाती है। ये कवि होने के साथ-ही-साथ प्रेम-मार्ग के अनुयायी थे। अतः इनकी कविता मे प्रेम का पुट मिलना स्वाभाविक ही है। नीचे की इस कविता मे प्रेम की गम्भीर व्यञ्जना की गई है :

"मने मने करीले गुनावनि हो, पिया परम कठोर।
पाहनो पसीजि पसीजि के हो बहि चलत हिलोर ।।१।।
जे उठत विसय लहरिया हो, छने छने में घँघोर।
तनिको ना कनखि नजरिया हो, चितवत मोरे ओर ।।२।।

भावे घर, आँगन, ना सेजरिया हो, नाहि लहर पटोर।
बेंजन कवनो तरकरिया हो, जइसे माहुर घोर ॥३॥
तलफीलें आठो पहरिया हो, गति मति भइली भोर।
केहू ना चीन्हेला अजरिया हो, बिनु अवध किसोर ॥४॥
कइसें सहीं बारी रे उमिरिया हो, दुःख सहस कठोर।
'लछमी सखी' मोरा नाहिं भावेला हो, पथ भात परोर ॥५॥"

इस गीत मे शब्दो का माधुर्य जितना आकर्षक है, भावो का चमत्कार भी उतना ही प्रशंसनीय है। यह गीत क्या है रस का कलश है। **'पाहनो पसीजि पसीजि के हो बहि चलत हिलोर'** इस एक पक्ति मे प्रेम का समुद्र हिलोरे मार रहा है। **'तनिको ना कनखि नजरिया हो चितवन मोरे ओर'** मे कितनी करुणा और विवशता सिमटी पडी है। प्रियतम इतना कठोर है कि 'दृष्टिदान' की बात तो दूर रही वह आँख के कोने से भी नहीं देखता। **'तलफीले आठो पहरिया हो'** मे कितना गूढ भाव भरा पड़ा है। इस गीत मे भोजपुरी की खालिस मिठास के साथ लावण्य भी कुछ कम नहीं है।

लक्ष्मी सखी की कविता रहस्यवाद की ओर उन्मुख दिखाई पड़ती है। इसमे सच्चे रहस्यवाद की झलक पाई जाती है। भगवान् को प्रियतम मानकर बाँधा गया यह रूपक कितना सुन्दर तथा सरस है :

"सुनि सुनि पिया के सनेस हमरो जियरा ललचे ना।
टपर टपर गिरे लोर, सखिया चलते चलते ना ॥१॥
काहे जे औगुन भईल, बहुत गलते गलते ना।
तेहि से चले के साथ सखिया मलते मलते ना ॥२॥
पिया बिना जियवा हमरो हियवा कलपे ना।
जेकर तेज प्रताप घट घट नूर झलके ना ॥३॥
बेरि बेरि हेरीले बाट सखिया पलके पलके ना।
करि मंजन असनान सरजू जल जल जल के ना ॥४॥

राजा जनक के बेटी हम त दोसरा खलके ना।
'लक्ष्मी सखी' पिया धरवो बहियाँ छोड़वो बलके ना ॥५॥"

इस गीत की पद-शय्या बड़ी सरस बन पड़ी है। यह पद रस से भरा हुआ है।

बुलाकीदास—बाबा बुलाकीदास का नाम भोजपुरी के सन्त कवियो मे प्रसिद्ध है। चैता या 'घॉटो' के रचयिता के रूप मे इनका नाम भोजपुरी प्रदेश मे विख्यात है। इनका जन्म सं० १७८० वि० मे उत्तर प्रदेश के बलिया जिले के अन्तर्गत सुलतानपुर नामक गॉव मे हुआ था। ये सेंगर वंशी राजपूत कुल मे उत्पन्न हुए थे। इनके पिता का नाम जोधराय था। इनकी स्त्री कुन्द कुँवरि के नाम से प्रसिद्ध थीं। ये पढ़ी-लिखी थीं और कविता भी करती थी। बुलाकीदास ने अपने भजनो मे इनके नाम का उल्लेख किया है। विवाह के कुछ ही वर्षों के पश्चात् इन्होने गृहस्थाश्रम छोड़कर 'अमनपुर' गॉव मे अपनी कुटिया बनाई और विरक्त होकर अन्त समय तक वही रहे।

बुलाकीदास जी नित्य-प्रति कुछ भजन बनाकर भगवान् को सुनाया करते थे। इन भजनो को सुनकर इनके भक्त लोग इसे गाते थे। परन्तु बुलाकीदास जी की कवि-रूप मे ख्याति उनके द्वारा रचे गए चैता या 'घॉटो' नामक लोक-गीतो के कारण है, जो आज भी भोजपुरी प्रदेश मे घर-घर गाए जाते है। बुलाकीदास जी चैता को बनाकर उन्हे अपनी पुस्तक मे लिखते जाते थे। परन्तु दुर्भाग्यवश उनकी मृत्यु के उपरान्त इस हस्त-लिखित प्रति को कोई व्यक्ति चुरा ले गया। उनके भक्तो तथा श्रोताओ को जो चैता कण्ठस्थ याद थे उन्हींका आजकल प्रचार है। यदि इनके गीतो का संग्रह उपलब्ध होता तो वह भोजपुरी साहित्य की अमूल्य निधि होती। किसी उत्साही विद्वान् को चाहिए कि रसड़ा के आस-पास के गाँवो मे इनके नाम से जो गीत प्रसिद्ध है उनका संग्रह करके प्रकाशित करे।

बुलाकीदास जी के गीतो का कोई सग्रह उपलब्ध नहीं है। जन-

साधारण के कण्ठ मे उनके जो गीत सुरक्षित रह गए हैं वे ही उनकी कृति हैं। उन्होने प्रत्येक चैता के अन्त मे अपना नाम दे दिया है। अतएव उनके बनाये हुए गीतो को पहचानने मे देर नही लगती। नीचे लिखा हुआ उनका यह 'चैता' बड़ा प्रसिद्ध है जिसमे कोई स्त्री अपने आलसी तथा अधिक सोने वाले पति को कोस रही है :

"रामा साँझहि के सूतल फूटली किरिनिया हो रामा।
तबो नाहिं जागेला हमरो बलमुआ हो रामा।। १।।
रामा चुर घींचि मरलीं पइरिया घींचि मरली हों रामा।
तबो नाहिं जागेला सइयाँ अभागा हो रामा।।२।।
रामा गोड़ तोरा लागिला लहुरी ननदिया हो रामा।
रचि एक आपन भइया देंहु ना जगाई हो रामा।। ३।।
रामा कहसे के भउजी भइया के जगाई हो रामा।
हमरो भइया निंदिया के मातल हो रामा॥ ४॥
रामा तोरे लेखे ननदी तोर भइया निंदिया के मातल हो रामा।
मोरे लेखे चान सुरुज दुनो छपित भइले हो रामा।। ५।।
रामा 'दास बुलाकी' चइत घाँटो गावे हो रामा।
गाइ गाइ विरहिन सखी समुझावे हो रामा।। ६॥"

कोई स्त्री कहती है कि मेरा पति इतना आलसी तथा अधिक सोने वाला है कि वह सन्ध्या समय ही सो जाता है और दूसरे दिन सूर्योदय होने के पश्चात् भी नहीं जगता। मैंने उसे लकड़ी के टुकडे से मारकर जगाने का प्रयत्न किया परन्तु मेरा 'अभागा' प्रियतम फिर भी नही जगता। वह अपनी छोटी ननद को सम्बोधित करती हुई कहती है कि ए ननद! तुम अपने भैया को जरा जगा दो! इस पर ननद उत्तर देती है कि मेरा भाई तो गाढ़ निद्रा मे मस्त होकर सो रहा है। भला! मैं इसे कैसे जगा सकती हूँ? तब भावज कहती है तुम्हारे लिए तो तुम्हारा भाई सो रहा है परन्तु मेरे लिए तो सारा संसार ही शून्य दिखाई दे रहा है।

यह चैता कितना सुन्दर है। पत्नी का अपने प्रियतम के प्रति प्रेम कितना प्रगाढ है। एक दूसरा चैता देखिए जिसमे ननद और भावज पानी भरने के लिए पनघट पर गई है। वहाँ पर उसका परदेसी पति छद्म वेश मे आ जाता है और अपनी प्रियतमा से प्रेम की बातें करता है :[१]

"रामा ननदी भउजिया दुनो पनिहारिन हो रामा।
मिलि जुलि सागर पानी भरे चलली हो रामा ॥१॥
रामा भरि घूठि पनिया घरिलवो ना डूबे हो रामा।
कौन रसिक वे घरिला जुठि अवले हो रामा ॥२॥
रामा घरिला भरि भरि अरदा चढ़वली हो रामा।
केहू नाँहि घरिला मोर अलगावे हो रामा ॥३॥
रामा घोडवा चढ़ल आवे हंसराज हो रामा।
रचि एक घरिला मोर अलगाव हो रामा ॥४॥
रामा एक हाथे हंसराज घरिला अलगावे हो रामा।
दूजा रे हाथे आंचर धई बेलमावे हो रामा ॥५॥
रामा छोड़-छोड़ हंसराज मोर आँचरवा हो रामा।
मोरा घरे बाड़ी सासु ननदी दारुनिया हो रामा ॥६॥
रामा जो तोर सुन्नरी, सासु-ननदी दारुनिया हो रामा।
काहे लागि सागर पनिया के अइली हो रामा ॥७॥
रामा देवरा भुखाइल आरे भइया पाहुन हो रामा।
ओहि लागि सागर पनिया के अइली हो रामा ॥८॥
रामा 'दास बुलाकी' चइत घाँटो गावे हो रामा।
गाइ गाइ बिरहिन सखी समुझावे हो रामा ॥९॥"

---

१. लेखक की 'भोजपुरी ग्राम गीत' (भाग १) नामक पुस्तक पृ० ३४२।

: ४ :

लोक-साहित्य

जैसा कि पहले कहा जा चुका है भोजपुरी साहित्य को सामान्यतया चार भागो मे विभाजित किया जा सकता है—(१) सन्त साहित्य, (२) लोक साहित्य, (३) आधुनिक साहित्य, (४) प्रकीर्ण लोक-काव्य। भोजपुरी मे लिखे गए सन्त साहित्य का संक्षिप्त परिचय पिछले पृष्ठो मे दिया जा चुका है। यहाँ भोजपुरी के लोक-साहित्य का विवरण प्रस्तुत करने का विनम्र प्रयास किया जा रहा है। आजकल भोजपुरी में सग्रहीत जो लोक-साहित्य उपलब्ध होता है उसको हम दो विभागो मे विभक्त कर सकते है—(१) यूरोपीय विद्वानो द्वारा सकलित, (२) भारतीय विद्वानो द्वारा सग्रहीत। इसमे सन्देह नहीं कि भोजपुरी लोक-गीतो के संग्रह का श्रीगणेश उन पश्चिमी विद्या-प्रेमी शासको ने किया था जो इस देश मे गत शताब्दी के उत्तरार्ध मे शासन करने के लिए आये थे। उनके इस मौलिक कार्य की जितनी भी प्रशंसा की जाय थोडी है। उन विदेशी विद्वानो ने लोक-साहित्य के महत्त्व को समझकर इनका संग्रह तथा प्रकाशन भी किया। विदेशी जनता के सामने भोजपुरी लोक-साहित्य के सुन्दर तथा मनोरम गीतो को रखकर उन्होने इसकी महत्ता को प्रति-

पादित किया। इन विदेशी मनीषियो मे डॉ० सर जार्ज ग्रियर्सन का नाम बहुत प्रसिद्ध है, जिन्होने लिंग्विस्टिक सर्वे ऑफ इण्डिया के सुपरिन्टेण्डेण्ट के पद से बडा महत्त्वपूर्ण कार्य किया है। परन्तु इन विद्वानो के संग्रह-कार्य का वर्णन करने के पहले भोजपुरी लोक-साहित्य का सामान्य परिचय देना आवश्यक प्रतीत होता है।

सामान्य परिचय

भोजपुरी लोक-साहित्य को प्रधानतया चार भागो मे विभक्त किया जा सकता है—

(क) लोक-गीत
(ख) लोक-गाथा
(ग) लोक-कथा
(घ) प्रकीर्ण-साहित्य

भोजपुरी-साहित्य मे लोक-गीतो का ही अश अधिक है। सच तो यह है कि भोजपुरी का जो साहित्य अब तक लिपिबद्ध किया गया है उससे उसका मौखिक साहित्य कई गुना अधिक है, जो अभी तक लिपि की कारा मे बन्द नहीं किया जा सका है। इसी लोक-साहित्य का संक्षिप्त परिचय पाठको के सामने उपस्थित किया जा रहा है।

लोक-गीतो को साधारणतया पॉच भागो मे बॉटा जा सकता है—

(१) संस्कार-सम्बन्धी गीत
(२) ऋतु-सम्बन्धी गीत
(३) जाति-सम्बन्धी गीत
(४) व्रत-सम्बन्धी गीत
(५) क्रिया-सम्बन्धी गीत

पं० रामनरेश त्रिपाठी ने लोक-गीतो के अनेक प्रकारों का वर्णन किया है, परन्तु वे सभी प्रकार इन उपर्युक्त पॉचों भेदों मे ही अन्तर्भुक्त हो जाते हैं। सस्कार-गीत उन गीतो को कहते हैं जो विभिन्न संस्कारो के

अवसर पर गाये जाते हैं। ये संस्कार प्रधानतया निम्नाकित हैं—

(१) पुत्र-जन्म

(२) मुण्डन

(३) यज्ञोपवीत

(४) विवाह

(५) गवना या द्विरागमन

पुत्र-जन्म के अवसर पर जो गीत गाए जाते है उन्हे 'सोहर' कहते हैं। इन्हे 'सोहिलो' या 'मगल' भी कहा जाता है। 'सोहर' शब्द की उत्पत्ति 'शोभन' शब्द से हुई है। पुत्र का जन्म विशेष उत्सव का अवसर प्रदान करता है, अतएव उस प्रसन्नता को प्रकट करने के लिए गीत गाना स्वाभाविक ही है। परन्तु पुत्री के जन्म के अवसर पर ये गीत नहीं गाए जाते। पुत्र-जन्म के गीतो के दो भेद किये जा सकते हैं—(१) पूर्व-पीठिका और उत्तर-पीठिका, अर्थात् पुत्र के पैदा होने के पहले के गीत और उसके बाद मे गाए जाने वाले गीत। पूर्व-पीठिका मे गर्भिणी स्त्री की देह-यष्टि, दोहद (गर्भिणी की अभिलाषा) और प्रसव के कष्टो का सजीव वर्णन होता है और उत्तर-पीठिका के गीतो मे पुत्र-जन्म से उत्पन्न उछाह और उमंग का उल्लेख रहता है। सोहर बड़े ही सरस और सुन्दर होते हैं, जिन्हें पढ या सुनकर हृदय मे गुदगुदी पैदा होने लगती है।

जब बालक कुछ बड़ा हो जाता है तब उसका मुण्डन-सस्कार किया जाता है। यह संस्कार पुत्र-जन्म के विषम वर्षों अर्थात् पहले, तीसरे या पॉचवे वर्ष में किया जाता है। इस सस्कार के पहले बालक का बाल काटना निषिद्ध है। अतः इसे प्रथम केश-कर्तन-संस्कार समझना चाहिए।

जब लड़का आठ-दस वर्ष का हो जाता है तब उसका यज्ञोपवीत-संस्कार किया जाता है। भगवान् मनु ने लिखा है कि ब्राह्मण के पुत्र का यज्ञोपवीत-संस्कार आठवे वर्ष मे, क्षत्रिय का ग्यारहवे वर्ष मे और वैश्य का बारहवे वर्ष में होना चाहिए। किस जाति के बालक का किस

ऋतु मे यह सस्कार होना चाहिए, इसका भी विधान उन्होने किया है। प्राचीन काल मे यज्ञोपवीत-सस्कार होने के पश्चात् ब्रह्मचारी गुरुकुल मे चला जाता था और लगभग दस-बारह वर्ष तक विद्याध्ययन करने के पश्चात् वह घर लौटता था। इसे 'समावर्तन'-सस्कार कहते थे। यद्यपि आज का ब्रह्मचारी गुरुकुल मे पढने के लिए नहीं जाता परन्तु यज्ञोपवीत का यह सस्कार आज भी प्रायः किया जाता है। यज्ञोपवीत के गीतो मे ब्रह्मचारी की वेश-भूषा, भिक्षा-याचना तथा पढने के लिए काशी जाने का उल्लेख पाया जाता है।

भोजपुरी विवाह-सम्बन्धी गीतों मे विवाह के अवसर पर किये जाने वाले अनेक विधि-विधानो का वर्णन पाया जाता है। इन गीतो मे तिलक तथा दहेज की प्रथा, बारात का प्रस्थान, बारातियों के विभिन्न प्रकार के भोज्य-पदार्थ, मण्डप मे विवाह की विधि तथा सप्तपदी आदि का उल्लेख हुआ है। ये विवाह के गीत दो प्रकार के होते हैं—(१) वर-पक्ष के गीत और (२) कन्या-पक्ष के गीत। वर-पक्ष के गीतो मे जहाँ उछाह, उत्सव और उमग का वर्णन होता है, वहाँ कन्या-पक्ष वाले गीतो में विषाद की गहरी छाया दिखाई पड़ती है। एक गीत मे लिखा है कि जिस लडकी का आज विवाह हो रहा है, उसका पिता आज सुख की नींद कैसे सो सकता है। तिलक के पश्चात् वर तथा कन्या के घर मे विवाह-सम्बन्धी जो विभिन्न विधियाँ सम्पादित की जाती है, उन सभी अवसरो पर गीत गाए जाते हैं।

विवाह के कुछ दिनो के बाद जब लड़की पिता के घर से अपने पति के घर प्रथम बार जाती है, उसे 'गवना' कहते हैं। यह सस्कृत के 'गमन' शब्द का अपभ्रंश रूप है, जिसका अर्थ जाना है। चूँकि लड़की विवाह के पश्चात् प्रथम बार पति के घर 'गमन' करती है, अतः इसे 'गवना' कहा जाता है। गवना के गीत बड़े कारुणिक और हृदय-द्रावी होते हैं। इनमे करुण-रस लबालब भरा रहता है। पुत्री की विदाई सचमुच बडे ही दुःख का अवसर है। कालिदास ने लिखा है कि जब महर्षि कण्व

इस अवसर पर अपने आँसुओ की झडी को न रोक सके, तब साधारण मनुष्यो का दुखी होना स्वाभाविक ही है। एक गीत मे पुत्री की विदा के अवसर पर पिता के रोने से गगा मे बाढ़ के आने, माता के रोने से सर्वत्र अन्धकार छा जाने तथा भाई के रोने से पैर तक उसकी धोती भीगने का उल्लेख किया गया है :

"बाबा के रोवले गंगा बढ़ि अइली
आया के रोवले अनोर।
भइया के रोवले चरन धोती भीजें
भऊजी नयनवा ना लोर॥"

इस गीत मे पति-गृह को जाने वाली लडकी के माता-पिता और भाई का हृदय पिघलकर बहता हुआ दिखाई पड़ता है। इसी प्रकार अन्य गीतो मे माता-पिता के दुःख का वर्णन बड़ी ही मार्मिक रीति से किया गया है।

ऋतु-सम्बन्धी गीत

ऋतु-सम्बन्धी गीत वे है, जो विभिन्न ऋतुओ मे गाए जाते हैं; जैसे कजली, होली, चैता और बारहमासा आदि। जिस ऋतु के जो गीत हैं, वे उसी ऋतु मे गाए जाने पर आनन्ददायक होते है।

कजली सावन के मन-भावन महीने मे गाई जाती है। इस मास मे आकाश मे छाये हुए मेघों की कालिमा के कारण ही इन गीतो का नाम 'कजली' पड़ गया है। काजल—जो काला होता है—शब्द से 'कजली' शब्द की उत्पत्ति हुई है। सावन के दिनो मे प्रत्येक गाँव मे झूले पड जाते हैं। उन पर झूला झूलती हुई स्त्रियाँ कजली के गीत गाती है।

यो तो प्रत्येक गाँव मे कजली गाई जाती है, परन्तु मिर्जापुर की 'कजली' बड़ी प्रसिद्ध हैं। यहाँ सावन के महीने मे कजली के दगल भी हुआ करते है, जिसमे बड़े-बड़े गवैये भाग लेते है और गाने का यह क्रम कई दिनो तक चलता रहता है। कजली के गीतों मे बड़ी मनोरमता तथा

हृदयद्रावकता होती है, जिसे सुनकर श्रोतागण मुग्ध हो जाते हैं। एक गीत देखिए :

"झूला झूले राधिका प्यारी,
संग में कृष्ण मुरारी ना।
कथि के पालना कथि के डोरी,
कथि के गद्दिया ना।
सोने के पालना रेसम के डोरी,
चनन के गद्दिया ना।
झूला झूले राधिका प्यारी,
संग में कृष्ण मुरारी ना।"

कजली की एक दूसरी कड़ी देखिए, जो बहुत ही लोकप्रिय है :

"कइसे खेले जाइँ हम सावन मे कजरिया,
बदरिया घिरि आइल ननदी।"

फगुआ—इसे 'होली' भी कहते हैं, परन्तु भोजपुरी-प्रदेश मे यह 'फगुआ' के नाम से ही अधिक प्रसिद्ध है। 'फगुआ' फागुन के महीने मे गाया जाता है। यो तो पूरे फागुन के महीने में गवैये 'फगुआ' गाते हैं, परन्तु होली के दिन इसे गाने का विशेष प्रचार है। उस दिन दो दल आमने-सामने बैठकर बड़ी उमग के साथ होली गाते हैं। दल का नेता पहली कड़ी को गाता है और शेष लोग दूसरी कड़ी को उसके बाद गाते हैं। जैसे नेता इस कड़ी को पहले गायगा :

"आजु सदा सिव खेलत होरी"

इस के बाद दूसरे दल के लोग गायेंगे—

"जटा-जूट में गंग विराजे,
अंग में भसम रमोरी।"

इसी प्रकार यह सम्मिलित गान (कोरस) बहुत देर तक चलता रहता है। गवैये बड़ी मस्ती से होली के गीत गाते हैं। होली के गीत का एक उदा रण लीजिए :

"ब्रज में हरि होरी मचाई।
इतते आवत नवल राधिका, उतते कुँवर कन्हाई।
हिलि-मिलि फाग परसपर खेलत, सोभा बरनि न जाई।
आरे घरे घरे बजत बधाई।"

चैता—चैत्र के महीने मे गाए जाने वाले गीतो को 'चैता' कहते हैं। ये 'घाटो' के नाम से भी प्रसिद्ध है। चैता दो प्रकार होता है—(१) झलकुटिया (२) साधारण। झलकुटिया चैता उसे कहते हैं जो सामूहिक रूप से 'झाल' कूटकर (बजाकर) गाया जाता है। साधारण चैता वह है जिसे केवल एक ही व्यक्ति बिना किसी वाद्य की सहायता से गाता है। चैता गाने की पद्धति भी वही है जो होली गाने की है। इसके गाने मे आरोह-अवरोह का बड़ा सुन्दर क्रम होता है। इस गीत में प्रथम आरोह होता है, उसके पश्चात् अवरोह। यह आरोह भी क्रमिक होता है। इस प्रकार चैता के गाने का एक विशेष ढग होता है।

चैता की प्रथम पंक्ति में पहले 'आहो रामा' या 'रामा' और अन्त मे 'हो रामा' शब्द का प्रयोग किया जाता है। इन गीतो के रचयिता बुलाकीदास हैं। इनके नाम से अनेक 'घाटो' या 'चैता' प्रसिद्ध हैं।

चैता के गीतो मे सम्भोग श्रृंगार का पुट अधिक पाया जाता है। इनमे वह हृदय-द्रावकता है जो अन्य किसी गीत मे नहीं पाई जाती। चैत का महीना, श्रृगार रस का वर्णन, मधुर राग तथा कोमल कल-कण्ठ—इन सबके सयोग से यह गीत बड़ा मनोहारी होता है। यह चैता कितना हृदयहारी है इसे तो सहृदय ही समझ सकते हैं :

"आहो रामा सूतल रहलीं, पिया सँगे सेजिया हो रामा।
विरही मोहलिया सबद सुनावे हो रामा॥
बिरही कोइलिया।

आहो रामा गोड़ तोर लागेनी बाबा के बहेलिया हो रामा।
विरही मोहलिया, मारि ले आउ हो रामा॥
बिरही कोइलिया।"

बारहमासा—बारहमासा उन गीतो को कहते हैं जिनमे किसी विरहिणी की प्रत्येक मास मे होने वाली विरह-वेदना का वर्णन होता है। किन्ही-किन्हीं गीतो मे बारह महीनो के स्थान पर केवल छः महीनो का ही वर्णन होता है। बारहमासा लिखने की प्रथा बडी प्राचीन जान पडती है। जायसी ने 'पद्मावत' मे नागमती का वियोग-वर्णन 'बारहमासा' मे किया है। ऐसा ज्ञात होता है कि तत्कालीन लोक-साहित्य मे वियोग-वर्णन मे बारहमासा लिखने की जो प्रथा थी उसीका अनुकरण जायसी ने किया है। लोक-साहित्य मे बारहमासा का वर्णन उद्दीपन रूप मे ही किया गया है। आजकल इस गीत के गाने का उतना प्रचार नही है जितना अन्य गीतो का। इसकी रचना का प्रवाह भी कुछ मन्द पड गया है। इसका कारण विभिन्न मासो के वर्णन करने की क्षमता का अभाव ही समझना चाहिए।

जाति-सम्बन्धी गीत

भोजपुरी मे कुछ ऐसे भी लोक-गीत हैं जिन्हे एक जाति-विशेष के लोग ही प्रधानतया गाते हैं। जैसे विरहा अहीर लोगो का राष्ट्रीय गान है, और 'पचरा' को दुःसाध (हरिजन) लोग ही गाते हैं। जो अहीर जितना अधिक विरहा गाता है उसकी योग्यता उतनी ही अधिक समझी जाती है। इन लोगो के विवाह मे विरहा गाने की प्रतियोगिता हुआ करती है। 'विरहा', जैसा कि इसके नाम से ही प्रतीत होता है 'विरह' शब्द से बना हुआ है। ऐसा जान पड़ता है कि पहले 'विरहा' मे केवल विरह का वर्णन हुआ करता था, परन्तु आजकल सभी वस्तुएँ इस गीत के वर्ण्य विषय है। विरहा आकार मे तो छोटा होता है परन्तु हृदय के ऊपर इसका प्रभाव गम्भीर होता है। डॉ० ग्रियर्सन ने इन विरहो की बड़ी प्रशंसा की है। इनमे रस की प्रचुरता के साथ ही अलंकार का विधान पाया जाता है। नीचे के विरहे मे यमक तथा श्लेषालंकार का प्रयोग कितनी सुन्दर रीति से किया गया है :

"रसवा के भेजली भँवरवा के सँगिया
रसवा ले अइले हा घोर।
अतना ही रसवा में केकरा के बँटबों,
सगरी नगरी हित मोर।।"

पूर्वानुराग के विरह से पीड़ित किसी विरहिणी का यह चित्रण कितना मार्मिक है :

"पिया पिया कहत पियर भइली देहिया
लोगवा कहेला पिंड रोग।
गऊँवा के लोगवा मरमिया ना जानेला,
भइले गवनवा ना मोर।।"

चमार लोग भी एक विशेष प्रकार का गीत गाते हैं। इनका मुख्य बाजा 'डफरा' और 'पिपिहरी' है। 'पिपिहरी' मुँह से बजाई जाती है। इधर बाजा बजता है और उधर गाना होता रहता है। 'कहार' जाति के लोगो का प्रधान पेशा पानी भरना और पालकी ढोना होता है। ये लोग जो गीत गाते है वह 'कहरुवा' के नाम से प्रसिद्ध है। तेली लोग भी अपना जातीय गीत गाते है जिसमे 'कोल्हू' का वर्णन प्रधान होता है। धोबी लोग 'हुड्डुक' या 'हुड्डुका' नामक बाजा बजाते हुए गाते है। दु:साध लोगो द्वारा गाये जाने वाले गीतो को 'पचरा' कहते है। इन गीतो मे देवी की आराधना की जाती है। जाति-सम्बन्धी गीतो में 'पचरा' बड़ा प्रसिद्ध है। यह गीत के अतिरिक्त मन्त्र का भी काम करता है। दु:साध जाति मे यदि कोई व्यक्ति बीमार पड जाता है तो इस जाति का नेता या 'ओझा' इन्ही गीतो को गाकर उसकी बीमारी को दूर करता है।

व्रत-सम्बन्धी गीत

स्त्रियाँ विभिन्न मासो मे व्रतो के अवसर पर भिन्न-भिन्न गीतो को गाती है। जैसे भादो के महीने मे बहुरा के गीत, और कार्तिक मास मे

छठी माता के गीत गाए जाते हैं। चैत के महीने मे जब किसी बालक को चेचक निकल आती है तब उसकी शान्ति के लिए जो गीत गाये जाते है उन्हे 'शीतला माता के गीत' कहते है। चेचक रोग की अधिष्ठातृ देवी 'शीतला देवी' मानी जाती है। लोगों का ऐसा विश्वास है कि इस देवी की प्रार्थना करने तथा इसकी स्तुति मे गीत गाने से यह रोग दूर हो जाता है। इस गीत का वर्ण्य विषय शीतला देवी की प्रशसा है। चेचक से पीड़ित बालक की माता की शीतला से प्रार्थना बड़ी हृदयद्रावक है। ये गीत करुण रस से ओत-प्रोत हैं।

श्रावण शुक्ला पचमी को 'नाग पचमी' कहते हैं। इस दिन नाग अर्थात् सर्प की पूजा की जाती है। इन गीतो मे नाग की पूजा करने का उल्लेख पाया जाता है। भाद्र कृष्णा चतुर्थी को स्त्रियाँ 'बहुरा' का व्रत करती है। यह 'बहुला' भी कहा जाता है। इस अवसर पर गाए जाने वाले गीत 'बहुरा के गीत' कहलाते है। स्त्रियाँ इस व्रत को पुत्र की मगल-कामना के लिए किया करती हैं। कार्तिक शुक्ला प्रतिपदा को स्त्रियाँ 'गोधन' का त्यौहार मनाती हैं। इस दिन 'गोधन' की पूजा होती है। इस व्रत का प्रधान उद्देश्य भाई और बहन मे प्रेम-भावना की वृद्धि है। 'पिड़िया' का व्रत कार्तिक शुक्ला प्रतिपदा से प्रारम्भ होकर अगहन शुक्ला प्रतिपदा तक पूरे एक मास रहता है। गोबर के छोटे-छोटे पिण्डो को 'पिड़िया' कहते हैं। इन गीतो मे भाई-बहन के अटूट प्रेम का वर्णन रहता है। यह व्रत भाई के प्रति बहन के अलौकिक प्रेम का प्रतीक है। कोई बहन कहती है : **'तोहरी बधइया भइया पिड़िया बरतिया हो।'** कार्तिक मास के शुक्ल पक्ष की षष्ठी तिथि को 'छठी माता' का व्रत होता है। पुत्र की प्राप्ति के लिए यह व्रत किया जाता है। इसमे सूर्य की पूजा की जाती है। अतएव इसे 'सूर्य षष्ठी व्रत' भी कहते है। वन्ध्या स्त्रियाँ इस व्रत को विशेष रूप से करती हैं। कोई ऐसी ही स्त्री पुत्र की भिक्षा माँगती हुई कहती है कि :

'खोरिया रउरी बहारबि, पूतवा भी खि दीं।"

क्रिया-सम्बन्धी गीत

किसी काम को करते समय जो गीत गाए जाते हैं, उन्हे 'क्रिया-गीत' कहते है। ये गीत श्रम के भार को भुलाने अथवा दूर करने के लिए गाए जाते हैं। इन गीतो मे जतसार, सोहनी तथा रोपनी के गीत परिगणित हैं। स्त्रियाँ चक्की पीसते हुए, अपने परिश्रम को हल्का करने के लिए जो गीत गाती हैं, उन्हे जॉत के गीत या 'जॅतसार' कहते हैं। इन गीतो का प्रधान रस करुण तथा शृंगार है। इनमे कहीं तो प्रिय-विहीना, दुःखिनी विधवा का करुण क्रन्दन सुनने को मिलता है, तो कहीं वन्ध्या स्त्री की मनोवेदना का वर्णन पाया जाता है। कहीं किसी विरहिणी की विरह-दशा का उल्लेख है, तो कहीं सास के द्वारा वधू की नारकीय यन्त्रणा का चित्रण। जॉत के गीतो मे करुण रस की सरिता अविच्छिन्न रूप से बहती दिखाई देती है।

बिहार राज्य के आरा (शाहाबाद) जिले मे—जहाँ धान की पैदावार अधिक होती है—रोपनी के गीतो का अधिक प्रचलन है। धान को रोपते समय सामूहिक रूप से रोपने वाली स्त्रियाँ जो गीत गाती है, उन्हे 'रोपनी के गीत' कहते है। खेत मे जमे हुए घास की निराई करते समय गाये जाने वाले गीत 'सोहनी के गीत' कहलाते है। ये गीत किसी संक्षिप्त कथानक को लेकर लिखे गए होते हैं। इन गीतो मे कहीं मुगलो के अत्याचारो का वर्णन है, तो कहीं उनसे लड़कर किसी अबला का उद्धार करने वाले किसी वीर पुरुष का।

इनके अतिरिक्त कुछ ऐसे भी फुटकर गीत हैं, जिनका अन्तर्भाव ऊपर लिखी गई किसी भी श्रेणी मे नहीं होता। ये गीत हैं—झूमर, अलचारी, पूर्वी और भजन। इनमें झूमर बहुत प्रसिद्ध है, जो झूम-झूमकर प्राय. प्रत्येक अवसर पर गाया जाता है। 'पूर्वी' का उल्लेख आगे किया जायगा। भक्ति-सम्बन्धी गीतो को 'भजन' कहते हैं।

लोक-गाथा

लोक-गाथा उन गीतो को कहते है, जिनकी कथा-वस्तु लम्बी होती है। इनमे किसी बड़े कथानक को लेकर पद्य के रूप मे उसे निबद्ध किया जाता है। इनमे कथा की ही प्रधानता रहती है, अन्य वस्तुओं की नही। इस प्रकार लोक-गीतो से लोक-गाथाओ का पार्थक्य स्पष्ट है। लोक-गीतो को हम गेय गीत (लिरिक) कह सकते है। लोक-गाथाएँ अँग्रेजी शब्द 'बैलेड' के अर्थ को द्योतित करती है।

भोजपुरी मे ऐसे बहुत-से गीत हैं, जिनकी कथा-वस्तु बहुत बडी है। ऐसे गीतो को लोक-गाथा का नाम दिया गया है। इन गीतो मे लोरकी, विजयमल, नयकवा बनजारा, भरथरी, गोपीचन्द, सोरठी और आल्हा के गीत प्रसिद्ध हैं। इनके कथानक को लेकर महाकाव्य के रूप मे मोटी-मोटी पुस्तके पद्य मे लिखी गई हैं, जिनमे से कुछ का उल्लेख अगले पृष्ठो मे किया जायगा। इन लोक-गाथाओ मे आल्हा सबसे अधिक प्रसिद्ध है। इसके रचयिता का नाम जगनिक था, जिनका मूल ग्रन्थ बुन्देलखण्डी मे लिखा गया था। आज आल्हा के मूल रूप का पता नहीं चलता। परन्तु इसके कन्नौजी और भोजपुरी पाठ (वर्णन) आज भी उपलब्ध है। भरथरी—गोपीचन्द मे राजा भर्तृहरि की कथा का बड़े ही सरस शब्दो मे वर्णन किया गया है। अनेक जोगी (एक प्रकार के साधु) सारङ्गी बजाकर राजा भरथरी के गीत गाकर भिक्षा की याचना किया करते हैं।

इन लोक-गाथाओ की दस निजी विशेषताएँ है, जिनका विस्तृत वर्णन इन पक्तियो के लेखक ने अपने 'भोजपुरी लोक-साहित्य का अध्ययन' नामक निबन्ध (थीसिस) मे किया है, जो हिन्दी-साहित्य सम्मेलन, प्रयाग से प्रकाशित हो चुका है।

लोक-कथा

भोजपुरी-साहित्य मे कथाओ की सख्या बहुत अधिक है। घर की बूढी दादियो को लोक-कथाओ का अक्षय भण्डार समझना चाहिए। अभी तक भोजपुरी लोक-कथाओं का कोई सग्रह प्रकाशित नही हुआ है। वर्तमान लेखक ने सैकडो भोजपुरी कथाओ का सग्रह किया है। बिहार-राज्य के चम्पारन जिले के निवासी प० गणेश चौबे ने भी कुछ कथाओ को सग्रहीत करके उन्हे काल के गाल मे जाने से बचाया है।

भोजपुरी मे जो लोक-कथाएँ उपलब्ध हैं, उन्हे हम निम्नाकित श्रेणियो मे विभक्त कर सकते है—

(१) उपदेश-कथा, (२) हास्य-कथा, (३) व्रत-कथा, (४) प्रेम-कथा, (५) सामान्य कथा।

डॉ० दिनेशचन्द्र सेन ने अपने 'फोक लिटरेचर आफ बगाल' नामक ग्रन्थ मे लोक-कथाओ के निम्नाकित भेदो का उल्लेख किया है—

(१) रूप-कथा (भूत-प्रेत तथा देवी-देवताओ की कथा),
(२) हास्य-कथा (हँसी उत्पन्न करने वाली कथाएँ),
(३) व्रत-कथा (धार्मिक कहानियाँ),
(४) गीत-कथा (बच्चो को सुलाने वाली कहानियाँ)।

भारतीय कथा-साहित्य अत्यन्त प्राचीन है। 'दीघ निकाय' के ब्रह्म-जाल सुत्त मे एक स्थान पर कथाओ के जो भेद दिये गए है, उनसे प्राचीन कथाओ की व्यापकता स्पष्टतया प्रतीत होती है। वे भेद इस प्रकार है—

१. राज कथा, २ चोर कथा, ३ महामात्र कथा, ४ सेना कथा, ५. भय कथा, ६ युद्ध कथा, ७. अन्न कथा, ८ पान कथा, ९ वस्त्र कथा, १० शयन कथा, ११ माला कथा, १२ गन्ध कथा, १३. ज्ञाति कथा, १४. यान कथा, १५. ग्राम कथा, १६. निगम कथा, १७. नगर-कथा, १८. जनपद कथा, १९. स्त्री कथा, २०. पुरुष कथा, २१ शूर कथा, २२. विशिखा कथा (बाजार की गप्पे), २३. कुम्भ-स्नान

कथा (पनघट की कथाएँ), २४. पूर्व-प्रेत-कथा (मृत लोगों की कहानियाँ), २५. निरर्थक कथा, २६. लोकाख्यायिका और (२७) समुद्राख्यायिका ।

भोजपुरी लोक-कथाएँ प्रधानतया गद्य मे हैं । कुछ कथाएँ ऐसी भी हैं, जो सस्कृत के चम्पू-काव्य की भाँति गद्य-पद्य-मिश्रित भाषा मे लिखी गई हैं । इन लोक-कथाओ की वर्णन-शैली बड़ी सरल है । इनकी भाषा सरस होती है, जिससे सुनते ही सारी बाते समझ मे आ जाती हैं ।

भोजपुरी लोक-कथाओं मे अधिकाश कथाओ का मूल रूप सस्कृत के कथा-साहित्य मे पाया जा सकता है । भोजपुरी मे प्रसिद्ध 'ठनठनपाल' की कथा बौद्ध जातको मे प्रायः उसी रूप मे प्राप्त होती है । यदि इन कथाओ का अध्ययन किया जाय, तो बहुत-सी कथाओ के मूल रूप का पता लगाया जा सकता है ।

इन कथाओ को सर्वप्रथम संग्रहीत करने का श्रेय यूरोपीय विद्वानो को प्राप्त है । सन् १८८५ ई० मे डॉ० ग्रियर्सन का 'बिहार पीज़ेएट लाइफ़' नामक ग्रन्थ प्रकाशित हुआ । प्रायः इसी समय डॉ० फ़ैलन का 'डिक्शनरी आफ़ हिन्दुस्तानी प्रोवर्स' प्रकाश मे आया । तत्पश्चात् जॉन क्रिश्चियन का 'बिहार प्रोवर्स' निकला । इन ग्रन्थो मे जहाँ कही भी ऐसी कहावते आई हैं, जिनकी पृष्ठभूमि मे कोई लोक-कथा है, उसका सक्षेप मे उल्लेख किया गया है । इधर बिहार-राज्य के आरा जिले के एक अध्यापक श्री ए० बनर्जी ने 'फ़ोक टेल्स ऑफ बिहार' के नाम से भोजपुरी की दस लोक-कथाओ का संग्रह प्रकाशित किया है । परन्तु उपर्युक्त ये सब कार्य अभी तक अंग्रेज़ी भाषा मे ही किये गए है । भोजपुरी लोक-सभाओ का वैज्ञानिक पद्धति से संग्रह तथा सम्पादन करके प्रकाशित करने की नितान्त आवश्यकता है । आशा है, प्रस्तुत लेखक द्वारा किया गया भोजपुरी-कथा-संग्रह शीघ्र ही प्रकाशित होगा ।

प्रकीर्ण साहित्य

भोजपुरी में हजारों मुहावरे, लोकोक्तियाँ, सूक्तियाँ, सुभाषित, घाघ और भडरी की उक्तियाँ और पहेलियाँ प्रचलित हैं, जो लोक-साहित्य के उपर्युक्त श्रेणी-विभाग के अन्तर्गत नहीं आतीं। अतएव इनको प्रकीर्ण-साहित्य के अन्तर्गत रखा गया है। इन कहावतों तथा लोकोक्तियो के अध्ययन से भोजपुरी समाज की अवस्था पर अच्छा प्रकाश पड़ता है। भोजपुरी की एक कहावत है '**तसलवा तोर कि मोर**' इससे वहाँ के निवासियो की वीरता का परिचय मिलता है। भोजपुरियो का दृष्टिकोण कितना उपयोगितावादी है, इसकी झलक नीची लिखी लोकोक्ति मे पाई जाती है—'**बुढ़ऊ के खाईल अवरु नाव के भराइल**' अर्थात् बूढ़े का खाना और नाव का डूब जाना बराबर है। घाघ और भडरी की उक्तियो में कृषि-सम्बन्धी अनुभव की बाते कही गई हैं। इन उक्तियों का सग्रह तथा प्रकाशन पं० रामनरेश त्रिपाठी ने किया है। भोजपुरी में ऐसी बहुत-सी पहेलियाँ या 'बुझौवल' प्रचलित है, जिन्हे लड़के एक-दूसरे से पूछकर अपना मनोरञ्जन किया करते हैं। डा० उदयनारायण तिवारी एम० ए० डी० लिट्, प्राध्यापक, प्रयाग विश्वविद्यालय ने भोजपुरी कहावतो, मुहावरो और पहेलियों का संग्रह करके कुछ वर्ष हुए प्रयाग की 'हिन्दुस्तानी' पत्रिका मे प्रकाशित किया था। परन्तु इनका पुस्तकाकार प्रकाशन अभी तक नहीं हुआ है। इसके अतिरिक्त बहुत-से ऐसे खेल प्रचलित हैं, जिन्हे खेलते समय बालक गीतमयी पक्तियो को दुहराते रहते है। जैसे कबड्डी खेलते समय की ये पंक्तियाँ हैं :

"ए कबड्डिया रेता, भगत मोरा बेटा।
भगताइन मोर बेटी, खेलबि हम होरी।।

इसी प्रकार भोजपुरी का प्रकीर्ण साहित्य भी कुछ कम नही है।

यूरोपीय विद्वानों द्वारा लोक-साहित्य का संग्रह

आज से लगभग सौ वर्ष पूर्व यूरोपीय विद्वानो का ध्यान भोजपुरी लोक-गीतो के सग्रह की ओर आकर्षित हुआ था। उस समय जब इस देश मे लोक-साहित्य के सग्रह की चर्चा भी नहीं थी। इन विद्वानो का यह कार्य सचमुच सराहनीय है। इन लोगो ने लोक-गीतो के महत्त्व को समझा और इनका सग्रह करके वैज्ञानिक रीति से इनका सम्पादन किया। इनके द्वारा प्रस्तुत संग्रह आज भी हमारा पथ-प्रदर्शन कर रहे हैं।

इसमे सन्देह नही कि इस देश मे, विशेषकर भोजपुरी प्रदेश में—लोक-गीतो तथा लोक-कहानियो का संग्रह सर्वप्रथम इन्हीं विद्वानो ने किया। जहाँ तक इन पक्तियो के लेखक को याद है भोजपुरी लोक-गीतो के सग्रह का कार्य सर्वप्रथम डॉ० सर ग्रियर्सन ने प्रारम्भ किया था। इन्होंने १६वी शताब्दी के उत्तरार्ध मे अनेक भारतीय तथा यूरोपीय शोध-पत्रिकाओ मे भोजपुरी के गीतों का सग्रह प्रकाशित किया। डॉ० ग्रियर्सन के अतिरिक्त विलियम क्रुक, ग्राउ्स, इरविन और फ्रेजर आदि सज्जनों ने भी लोक-गीतो का सग्रह किया। इनके सग्रह के सम्बन्ध मे यह कथन अनुपयुक्त न होगा कि इन्होंने लोक-गीतों के संग्रह की कोई स्वतन्त्र पुस्तक नही लिखी, बल्कि पत्र-पत्रिकाओ मे इसके सग्रह प्रकाशित किये हैं। आज इनके सग्रह का पता लगाना भी कुछ आसान नही है। परन्तु अनु-सन्धान द्वारा इनकी कृतियो का जितना पता चला है उसका सक्षिप्त विवरण यहाँ उपस्थित किया जाता है।

डॉक्टर सर जार्ज ग्रियर्सन

डॉ० ग्रियर्सन ने भोजपुरी लोकगीतो के सग्रह के सम्बन्ध मे बडा ही प्रशंसनीय कार्य किया है। इन्होने सन् १८८४ ई० में इगलैण्ड की रॉयल एशियाटिक सोसाइटी की पत्रिका मे कुछ 'बिहारी लोक-गीतो' का

संग्रह प्रकाशित किया था ।[1] ये गीत बिहार राज्य के आरा और पटना जिलो से इकट्ठे किये गए थे। अतः प्रधानतया ये भोजपुरी के ही गीत हैं। इनमे से कुछ गीतो मे मगही का भी पुट पाया जाता है, परन्तु उनकी आत्मा भोजपुरी ही है। इस लेख के आरम्भ मे बिहार राज्य की तीन प्रधान बोलियॉ—मगही, मैथिली और भोजपुरी का थोडा-सा विवेचन किया गया है। इसके पश्चात् सोहर, जतसार, झूमर आदि गीत दिये गए है। इन गीतो का अग्रेजी अनुवाद भी हुआ है।

डॉ० ग्रियर्सन का दूसरा लेख इसी पत्रिका मे 'भोजपुरी लोक-गीत' के नाम से प्रकाशित हुआ था ।[2] इस लेख के प्रारम्भिक आठ पृष्ठो मे लेखक ने भोजपुरी भाषा की विशेषता, उसके साहित्य तथा गीतो के छन्द आदि के विषय मे सुन्दर प्रकाश डाला है ।[3] इस लेख मे कुल मिलाकर ४६ गीतो का सग्रह किया गया है, जिनमे केवल विरहो की सख्या ४२ है। इसके पश्चात् घाटो या चैता और जतसार के भी गीत है। इस लेख मे गीतो के मूल पाठ के साथ उनका अग्रेजी मे अनुवाद भी प्रस्तुत किया गया है। विद्वान् लेखक ने गीतो के अन्त मे टिप्पणियॉ भी दी है, जिनमे गीत मे प्रयुक्त शब्दो की व्युत्पत्ति, उनक विभिन्न अर्थ आदि विपयो का विवेचन बडी मार्मिक रीति से किया गया है। स्थान-स्थान पर इतिहास तथा भूगोल-सम्बन्धी टिप्पणियॉ भी पाई जाती है।

डॉ० ग्रियर्सन ने सन् १८८४ ई० मे बगाल की एशियाटिक सोसाइटी की पत्रिका मे सुप्रसिद्ध 'विजयमल' की लोक गाथा को प्रकाशित किया था ।[4] यह गीत बिहार राज्य के शाहाबाद जिले से प्राप्त किया गया

१. जनरल ऑफ दि रायल एशियाटिक सोसाइटी भाग १६ (सन् १८८४ ई०), पृ० १९६
२. वही, भाग १८ (सन् १८८६ ई०) पृ० २०७
३. वही, भाग १८ (सन् १८८६ ई०) पृ० २०७—२१४
४ जे० ए० एस० बी० भाग ५३ (सन् १८८४ ई०) खण्ड ३ पृ० ९४ (दि सांग आफ विजयमल)

था। 'विजयमल' भोजपुरी भाषा का महाकाव्य है, जो ११३८ पंक्तियो मे समाप्त हुआ है। ग्रियर्सन ने मूल के साथ ही इस पूरी लोक-गाथा का अंग्रेजी मे अनुवाद भी किया है। स्थान-स्थान पर पाद-टिप्पणियाँ भी पाई जाती हैं, जो महत्त्वपूर्ण हैं, इसी पत्रिका के एक दूसरे अक मे इन्होंने 'राजा गोपीचन्द के गीत के दो विभिन्न पाठों' को संग्रहीत किया है।[1] राजा गोपीचन्द की कथा बड़ी प्रसिद्ध है और इसका प्रचार भोजपुरी प्रदेश के अतिरिक्त अन्य प्रान्तो मे भी पाया जाता है। परन्तु भिन्न-भिन्न प्रान्तो में इनके गीत विभिन्न रूप मे पाये जाते है। डॉ० ग्रियर्सन ने बिहार राज्य के मगध तथा भोजपुरी प्रदेश मे प्रचलित इस गीत के विभिन्न पाठो (वर्शन्स) को एकत्रित किया है। इस गीत का भी अग्रेजी अनुवाद पाद-टिप्पणियो के साथ प्रस्तुत किया गया है। इसी पत्रिका के एक अन्य अक मे इन्होंने 'मानिकचन्द का गीत' शीर्षक एक लेख लिखा है।[2] यह लेख बडा लम्बा है। मानिकचन्द राजा गोपीचन्द के पिता थे। अतः इस लेख मे गोपीचन्द के जीवन आदि के सम्बन्ध मे भी प्रचुर प्रकाश डाला गया है।

इसी विद्वान् ने 'इण्डियन एण्टिक्वेरी' नामक पत्रिका मे 'आल्हा के विवाह के गीत' को प्रकाशित किया है।[3] भोजपुरी प्रदेश में आल्हा के गीत बहुत ही प्रसिद्ध हैं तथा बड़े चाव से गाये जाते हैं। यह गीत भोजपुरी खण्ड-काव्य है, जो ५५८ पंक्तियो मे समाप्त हुआ है। इस लेख मे आल्हा की ऐतिहासिकता पर भी अच्छा प्रकाश डाला गया है। इसी पत्रिका मे लेखक ने 'आल्ह खण्ड' का सम्पूर्ण कथानक सक्षेप मे उपस्थित

१. वही—भाग ५४ (सन् १८८५ ई०) खण्ड १ पृ० ३५ (टू वर्शन्स आफ दि सॉग आफ गोपीचन्द)

२. बुलेटिन आफ दि स्कूल आफ ओरियण्टल स्टडीज, लन्दन इन्स्टीट्यूट भाग १, खण्ड ३ (१९२०), पृ ८७।

३. जे० ए० सो० बं०, भाग १३ (१८७८), खण्ड १, नं० ३ (दि सॉग आफ मानिकचन्द)।

किया है[1] जिससे आल्हा के पूरे जीवन-चरित को जानने मे बड़ी सहायता मिलती है। लन्दन की प्राच्य-विद्या-परिषद् की पत्रिका मे डॉक्टर ग्रियर्सन ने 'उत्तरी भारत का लोक-साहित्य' नामक एक लेख प्रकाशित किया है, जिसमे भोजपुरी भाषा के भी अनेक गीत सम्मिलित है।[2] इस लेख मे डॉ० ग्रियर्सन ने उत्तरी भारत मे प्रसिद्ध तुलसी और सूर की कविताओ का उदाहरण देते हुए भोजपुरी के कुछ गीतो को भी उद्धृत किया है। इस गीत मे भोजपुरी प्रदेश मे प्रचलित भगवती देवी और बस्तीसिह के सुप्रसिद्ध लोक गीत भी संग्रहीत हैं। इन लेखो के अतिरिक्त डॉ० ग्रियर्सन ने जर्मन भाषा की सुप्रसिद्ध शोध-पत्रिका मे 'नयवका वनजारा' शीर्षक लोक-गाथा को सग्रहीत कर प्रकाशित किया है।[3] यह गाथा बड़ी विस्तृत है तथा इस प्रदेश मे बड़ी लोकप्रिय है।

ह्यू ज फ्रेज़र—यह उत्तर प्रदेश के गोरखपुर जिले के जिलाधीश थे। इन्होने बगाल की एशियाटिक सोसाइटी की पत्रिका मे गोरखपुर जिले मे प्राप्त भोजपुरी गीतो का सग्रह प्रकाशित किया है।[4] इन गीतो की सख्या १३ है। इनका अग्रेजी अनुवाद भी फ्रेजर ने किया है, जो गीतो के साथ ही प्रकाशित हुआ है।

जे० *बीम्स* ने 'भोजपुरी भाषा पर टिप्पणियॉ' शीर्षक लेख प्रकाशित किया था।[5] ये भोजपुरी व्याकरण के उत्कृष्ट विद्वान् थे। इस लेख मे भोजपुरी व्याकरण का विवेचन करने के साथ ही कुछ इसके गीतो को उदाहरण के रूप मे उद्धृत किया गया है।

---

१. इण्डियन एण्टिक्वेरी भाग १४ (१८८५), पृ०२०९।
२. वही······पृ० २५५।
३. जेड० डी० एम० डी०, भाग ४३, खण्ड ३ (१८८९), पृ० ४६८।
४. ज० ए० सी० बं०, भाग ५२ (१८८३) पृ० १।
५. ज० ए० सो० बं०, भाग ३, न्यू सीरीज़ (१८६८), पृ० ४८३ (नोट्स आन दि भोजपुरी डायलेक्ट आफ हिन्दी एज़ स्पोकेन इन वेस्टर्न बिहार)।

ए० जी० शिरेफ—ये उत्तर प्रदेश के एक अग्रेज सिविलियन थे। कुछ दिनो तक ये जौनपुर जिले के जिलाधीश भी थे। प० रामनरेश त्रिपाठी के सम्पर्क से सम्भवतः आपका ध्यान लोक-गीतो की ओर आकर्षित हुआ। इन्होने 'हिन्दी फोकसोंग्स' नामक पुस्तक लिखी है, जिसमे भोजपुरी के १६ गीतो का अग्रेजी मे अनुवाद प्रस्तुत किया गया है।[१] इस पुस्तक मे अनुवाद के साथ मूल गीत भी दिये गए है। इस प्रकार लोक-गीतो के सर्वप्रथम सग्रह का श्रेय इन्हीं विदेशी विद्वानो को प्राप्त है।

भारतीय विद्वानो द्वारा लोक-साहित्य का सकलन

यह हर्ष का विषय है कि भारतीय विद्वानो का ध्यान लोक-गीतो के सग्रह की ओर अधिकाधिक आकर्षित हो रहा है। हिन्दी-भाषा के लोक-गीतो के सर्वप्रथम सग्रह का श्रेय प० रामनरेश त्रिपाठी को प्राप्त है, जिन्होने बड़े परिश्रम से हिन्दी प्रान्तो मे घूम-घूमकर इन गीतो का संग्रह किया। त्रिपाठीजी का यह सकलन 'कविता-कौमुदी' भाग ५ (ग्राम-गीत) के नाम से प्रकाशित हुआ है।[२] यद्यपि इस ग्रन्थ मे हिन्दी की सभी बोलियो—व्रज, अवधी आदि—के गीतो का सग्रह किया गया है, परन्तु भोजपुरी लोक-गीतो की सख्या भी कुछ कम नहीं है। पुस्तक के प्रारम्भ मे १३८ पृष्ठो की एक विस्तृत भूमिका भी लिखी गई है, जिसमे लोक-गीतो का परिचय दिया गया है। 'सोहर' त्रिपाठी जी की दूसरी पुस्तक है, जिसमे इन्होने पुत्र-जन्म के अवसर पर गाए जाने वाले गीतो का संग्रह प्रकाशित किया है।[३] 'हमारा ग्राम-साहित्य' शीर्षक ग्रन्थ मे त्रिपाठीजी ने ग्राम-साहित्य का संक्षिप्त परिचय देते हुए विभिन्न प्रकार के लोक-गीतो का उदाहरण दिया है। इसके अतिरिक्त घाघ और भड्डरी की सूक्तियाँ भी सग्रहीत हैं। इस प्रकार त्रिपाठीजी की पुस्तको मे भोजपुरी

---

१. हिन्दी मन्दिर प्रयाग (१६३६) से प्रकाशित।

२. आत्माराम एण्ड संस, दिल्ली द्वारा प्रकाशित।

३. वही।

के अनेक गीत पाए जाते हैं।

भोजपुरी लोक-गीतो के संग्रह के क्षेत्र मे इस ग्रन्थ के लेखक ने भी विनम्र प्रयास किया है। प्रस्तुत लेखक के लोक-गीतो का सकलन 'भोजपुरी-ग्राम-गीत' के नाम से सं० २००० वि० मे प्रथम बार प्रकाशित हुआ था।[1] लेखक का यह संग्रह विभिन्न प्रकार के भोजपुरी लोक-गीतो के संकलन का प्रथम सर्वाङ्गीण प्रयत्न है। इस पुस्तक मे संग्रहीत गीतो का संकलन भोजपुरी प्रदेश के गॉव-गॉव मे घूमकर बडे परिश्रम से किया गया है। पुस्तक की भूमिका (लगभग १०० पृष्ठो की) पं० बलदेव उपाध्याय एम० ए०, साहित्याचार्य, रीडर, सस्कृत-विभाग, हिन्दू विश्व-विद्यालय, काशी ने लिखी है। जिसमें भोजपुरी भाषा और साहित्य पर प्रचुर प्रकाश डाला गया है।

इस सग्रह मे कुल २७१ लोक-गीतों का संकलन है। ये गीत संस्कार और ऋतु-क्रम से निम्नाकित १५ भागो मे विभक्त हैं—सोहर, खेलवना, जनेऊ, विवाह, वैवाहिक-परिहास, गवना, जॉत, छठी माता, शीतला-माता, झूमर, बारहमासा, कजली, चैता, विरहा और भजन। इस पुस्तक का सम्पादन वैज्ञानिक पद्धति से किया गया है। प्रसग के साथ गीत को लिखकर खडी बोली मे उसका अनुवाद भी लेखक ने दिया है। पाद-टिप्पणियो मे कठिन शब्दो के अर्थ भी हैं। पुस्तक के अन्त मे भोजपुरी-शब्द-कोष भी दिया है। इस प्रकार भोजपुरी लोक-गीतो का यह सर्वप्रथम वैज्ञानिक सग्रह है।

प्रस्तुत लेखक की दूसरी कृति 'भोजपुरी-ग्राम-गीत' भाग २ है। इस ग्रन्थ की भूमिका प्रयाग विश्वविद्यालय के भूतपूर्व वाइस-चान्सलर डॉ० अमरनाथ झा ने लिखी है। इस पुस्तक मे ४३० लोक-गीतो का संकलन किया गया है। ये गीत निम्नलिखित २५ प्रकार के हैं—सोहर,

१ हिन्दी-साहित्य सम्मेलन, प्रयाग (सं० २०००) से प्रकाशित। इस पुस्तक का द्वितीय संस्करण सम्मेलन द्वारा सं० २०११ में प्रकाशित हुआ है।

जोग, सेहला, विवाह, बहुरा, पिड़िया, गोधन, नागपचमी, जतसार, झूमर, कजली, बारहमासा, होली, डफ, चैता, सोहनी, रोपनी, बिरहा, कॉहार, गोड़, पचरा, निर्गुन, देशभक्ति, पूर्वी, पाराती और भजन। पुस्तक के अन्त मे लगभग १०० पृष्ठो की टिप्पणियॉ दी गई हैं, जिनमे गीतो मे आये हुए विषयो तथा शब्दो को लेकर भौगोलिक, ऐतिहासिक तथा भाषा-शास्त्र-सम्बन्धी विवेचन किया गया है। सम्भवतः इतने विभिन्न प्रकार के भोजपुरी-लोक-गीतो का संग्रह इस ग्रन्थ को छोड़कर अन्यत्र नही है।

प्रस्तुत लेखक ने अपने लोक-गीतो को सग्रह के दौरे के समय भोजपुरी लोक-गीतो के सकलन के अतिरिक्त अनेक लोक-गाथाओ तथा सैकड़ो लोक-कथाओ का भी संग्रह किया। ये लोक-गाथाऍ वे प्रबन्धात्मक गीत है, जो भोजपुरी प्रदेश मे बडे चाव से गाए जाते है। इन गाथाओ मे विजयमल, आल्हा, लोरकी, सोरठी, बिहुला और नयकवा बनजारा बहुत प्रसिद्ध हैं। सैकड़ो लोक-कहानियों का भी संग्रह प्रस्तुत लेखक ने किया है, जो बडी ही मनोरजक और शिक्षाप्रद है। इन लोक-गाथाओ और कथाओं का संग्रह अभी प्रकाशित नहीं हुआ है, परन्तु आशा है कि ये दोनो संग्रह शीघ्र ही प्रकाश मे आ जायँगे।

लेखक ने भी बड़े परिश्रम से भोजपुरी लोक-गीतो की स्वर-लिपि (नोटेशन) भी तैयार की है। यह स्वर-लिपि पेशे वाले गवैयो के द्वारा गीतो-को गवाकर तैयार की गई है। भोजपुरी मे जितने भी प्रकार के गीत है, उनके सभी प्रधान भेदो (टाइप) को लेकर स्वर-लिपि प्रस्तुत की गई है। सम्भवतः हिन्दी की किसी भी जनपदीय भाषा के लोक-गीतो की स्वर-लिपि प्रस्तुत करने का प्रयास अभी नहीं हुआ है। अतः इस दिशा मे लेखक का सम्भवतः यह सर्वप्रथम विनम्र प्रयत्न है। 'भोजपुरी-लोक-संगीत'-सम्बन्धी यह पुस्तक शीघ्र ही प्रकाशित होने वाली है।

श्री दुर्गाशंकरप्रसादसिह ने 'भोजपुरी लोक-गीतो मे करुण रस' के

नाम से एक संग्रह प्रकाशित किया है।[1] इस सग्रह में सोहर, जँतसार, झूमर, कहरुआ, भजन, बारहमासा, अलचारी, खेलवना, विवाह, पूर्वी, कजरी, रोपनी और निराई आदि के गीत सकलित हैं। पुस्तक के प्रारम्भ मे विद्वान् लेखक ने ८० पृष्ठ की भूमिका भी दी है, जिसमे भोजपुरी भाषा और साहित्य-सम्बन्धी अनेक ज्ञातव्य बाते दी गई हैं। दुर्गाशकरजी का दूसरा ग्रन्थ 'भोजपुरी कवि और काव्य' बिहार राष्ट्र-भाषा परिषद् से प्रकाशित हो रहा है। इसमे भोजपुरी के अनेक लुप्तप्रायः कवियों की कविताओ को खोजकर प्रकाश मे लाने का प्रयत्न किया गया है। इस ग्रन्थ के प्रकाशित हो जाने पर भोजपुरी साहित्य के अनेक विस्तृत कवि-रत्न प्रकाश में आ जायँगे तथा इस साहित्य की अनेक टूटी हुई कड़ियाँ जोड़ी जा सकती हैं।

डब्ल्यू० जी० आर्चर आई० सी० एस०, जो बिहार मे पटना डिवीज़न के कमिश्नर थे—तथा श्री सकटाप्रसाद ने 'भोजपुरी ग्राम्य-गीत' के नाम से भोजपुरी गीतो का सकलन किया है।[2] इस पुस्तक मे संग्रहीत गीतो की कुल संख्या ३७७ है। ये गीत बिहार राज्य (प्रान्त) के शाहाबाद जिले के कायस्थ-परिवार से संग्रह किये गए है। इन गीतो का संग्रह-काल १९३९–४१ ई० है। इस संग्रह मे केवल मूल गीत सकलित हैं। यदि इन गीतों का सन्दर्भ तथा अर्थ भी दे दिया गया होता, तो पुस्तक की उपयोगिता और भी अधिक बढ़ जाती। श्री आर्चर ने छोटा नागपुर मे निवास करने वाली उराँव जाति के लोक-गीतो का भी संग्रह किया है, जो 'लील खोरआ खे खेल' नाम से प्रकाशित हुआ है।

बिहार राज्य के चम्पारन जिले के निवासी पं० गणेश चौबे ने भोजपुरी लोक-गीतो और लोक-कथाओ का प्रचुर संग्रह किया है। यह एकान्तसेवी विद्वान् चिर-काल से भोजपुरी लोक-साहित्य की सेवा में

१. हिन्दी-साहित्य सम्मेलन, प्रयाग (सं० २००१) से प्रकाशित।

२. बिहार और उड़ीसा रिसर्च सोसाइटी, पटना (१९४३) द्वारा प्रकाशित।

एकान्त-भावना से निरत है। आपने अनेक लेख लिखकर लोक-गीतो को प्रकाश मे लाने का प्रयत्न किया है। इधर 'जनपद' मे आपके कई लेख प्रकाशित हुए हैं। आपने कई सौ भोजपुरी लोक-गीतो का साङ्गोपाङ्ग सम्पादन भी किया है। परन्तु अभी तक आपका सकलन साधन के अभाव मे प्रकाशित नही हो सका है। आशा है चौबेजी अपने लोक-गीतो और कथाओ के सग्रह को शीघ्र ही प्रकाशित करने का प्रयत्न करेंगे।

'आजकल' के भूत पूर्व सम्पादक तथा लोक-गीतो के उत्साही सग्रहकर्ता श्री देवेन्द्र सत्यार्थी ने यद्यपि भोजपुरी लोक-गीतो का कोई सग्रह तो प्रकाशित नही किया है, परन्तु उनके लोक-गीत-सम्बन्धी कई ग्रन्थो मे भोजपुरी के अनेक गीत पाए जाते है। 'धरती गाती है' तथा 'बेला फूले आधी रात' सत्यार्थी जी के ऐसे ही सग्रह हैं[1], जिनमे भोजपुरी के फुटकर गीत यत्र-तत्र पाए जाते हैं।

बम्बई की कम्युनिस्ट पार्टी ने 'धरती के गीत' के नाम से लोक-गीतो का एक छोटा-सा संग्रह प्रकाशित किया है। यह हिन्दी की विभिन्न बोलियो मे रचे गए गीतो का सग्रह है। खडी बोली, अवधी और ब्रज-भाषा के गीतो के अतिरिक्त इसमे भोजपुरी के भी कुछ गीत है।

अब तक भोजपुरी लोक-गीतो के जो संग्रह हुए हैं, उनका यही संक्षिप्त विवरण है। लोक-गीतो के प्रेमियो ने सम्भव है कुछ गीतों का सग्रह किया हो, परन्तु उनके संकलन अभी प्रकाश मे नहीं आए हैं। इधर 'भोजपुरी' नामक पत्रिका मे लोक-गीत-सम्बन्धी कई लेख प्रकाशित हुए हैं, जिनमे गीतो का थोड़ा सग्रह भी है। परन्तु कुछ फुटकर लोक-गीतो के अतिरिक्त इन गीतो का कोई विस्तृत संग्रह इस पत्रिका मे प्रकाशित नहीं हुआ है।

---

१. राजकमल पब्लिकेशन्स तथा राजहंस प्रकाशन, दिल्ली द्वारा प्रकाशित।

: ५ :

आधुनिक साहित्य

भोजपुरी के आधुनिक साहित्य से हमारा तात्पर्य उस साहित्य से है, जिसका निर्माण वर्तमान कवि और लेखक कर रहे हैं। इस साहित्य को पद्य, गद्य तथा नाटक इन तीन भागो मे विभक्त किया जा सकता है।

इनमे पद्य का ही अश अधिक है। भोजपुरी के नवयुवक कवियों ने पद्य के क्षेत्र मे एक नई दिशा मे काव्य-रचना प्रारम्भ की है। यह दिशा है ग्रामीण दृश्यो तथा प्रकृति का वर्णन, इन लोगो ने नये छन्दो मे नये भावो को भरने का प्रयत्न किया है।

भोजपुरी का गद्य अपनी प्रारम्भिक अवस्था मे है। अभी इसका विशेप विकास नही हुआ है। 'भोजपुरी' पत्रिका के प्रकाशन से अनेक लेखकों की रचनाएँ प्रकाशित होने लगी है, जिससे भोजपुरी गद्य की उन्नति हो रही है। अभी भोजपुरी मे कुछ कहानियो और जीवन-चरितो को छोडकर विशेप वस्तु प्रकाश मे नही आई है। भोजपुरी लोक-कथाओ का भण्डार अवश्य विशाल है, परन्तु अभी तक वे प्रकाशित नही हुई हैं। भोजपुरी नाटको मे भिखारी ठाकुर का 'विदेशिया' नाटक और राहुलजी के द्वारा लिखे गए 'नाटक-चक्र' उल्लेखनीय है। सम्भवतः

भोजपुरी मे कोई मौलिक उपन्यास अभी नहीं लिखा गया है । श्री रघुवश-नारायणसिह ने श्री वाएड़ावासिल वेस्का के उपन्यास का 'बोरो' नाम से अनुवाद किया है ।

(क) पद्य

बिसराम—भोजपुरी के कवियो मे बिसराम का स्थान महत्त्वपूर्ण है । अपढ होने पर भी इस भोजपुरी जन-कवि ने ऐसे सरस तथा भाव-पूर्ण पद्यो की रचना की है, जो किसी भी साहित्य के लिए गौरव की वस्तु हो सकती है । बिसराम का जन्म उत्तरप्रदेश के आजमगढ जिले के सिरामपुर नामक गॉव मे हुआ था । यह गॉव टोन्स नदी के किनारे बसा हुआ है, जिसका प्राचीन नाम 'तमसा' था । बिसराम का मन पढने-लिखने मे नहीं लगता था । युवावस्था मे इसका विवाह हुआ, परन्तु कुछ ही दिनो के पश्चात् इसकी प्रियतमा का देहान्त हो गया । अपनी प्राण-प्रिया के अकाल काल-कवलित होने के कारण इसके भावुक हृदय को बड़ी चोट पहुँची और इसका आन्तरिक शोक श्लोक (विरहा) के रूप मे प्रकट होने लगा—शोकः श्लोकत्वमागतः ।

बिसराम ने अपनी विरह-वेदना को विरहो के माध्यम से व्यक्त किया है । अपनी प्राण-प्रिया का शव श्मसान को जाते देखकर इस लोक-कवि के हृदय मे जो मनोव्यथा हुई थी उसका वर्णन इन पक्तियो मे कितना सुन्दर हुआ है :

"आजु मोरे घरनी निकलती मोरे घर से,
मोरा फाटि गइले आल्हर करेज ।
'राम नाम सत है' सुनि हम गइली बउराई ।
कवन रछसवा गइले रानी के हो खाई ।।
सुखि गइले आँसू नाँही खुलेले जबनियाँ ।
कहसे के निकारो में त दुखिया बचनिया ।"

बिसराम को अपनी प्रिया की सुधि सदा आती रहती है । श्मसान

मे पड़ी एक खोपड़ी को देखकर वह पूछ बैठता है कि :

"बिना अँखिया के तू त हऊ मोरी रानी,
जोहबू कइसे के बिछुड़लवा के बाट।"

पपीहे को 'पी-पी' करता हुआ सुनकर यह कवि उसे समझाते हुए कहता है कि ए पपीहा ! अब 'पी' के मिलने की आशा छोड़ो ! वियोगी का जीवन विरह की आग मे जलने के लिए ही होता है। विरह के बाद मिलने की आशा कहाँ ?

"रोअल धोअल अब छोड़ हो पपीहा,
तनि सुनि मोरिउ लेव बात।
विरहिन के सुख नाही मिलत मोर भइया,
उनके जरत बितेलै दिन-रात"

इन सीधी-सादी पंक्तियो मे कितना बड़ा शाश्वतिक सत्य भरा पड़ा है।

अन्त मे यह कवि अपनी प्रियतमा से—जीवित न सही मरकर ही सही—मिलने की आशा से प्रेरित होकर अपनी प्यारी नदी टोन्स (तमसा) से याचना करता है कि ऐ माता ! मरने के बाद मेरी हड्डियो को तुम वहीं बहाकर ले जाना जहाँ मेरी प्राण-प्यारी प्रियतमा की हड्डियो की राख पड़ी हो :

'मोरी हड़ियन के माता उहवा ले जइह,
जहाँ उनकी हड़ियन के रहे चूर।"

बिसराम के केवल बीस-तीस विरहो का ही अब तक पता चल सका है। परन्तु इन विरहो को पढने से उनकी सरलता का पता चल सकता है। बिसराम ने सच्चा भावुक कवि-हृदय पाया था। यही कारण है कि उसकी कविता मे इतनी मनोहरता तथा मर्मस्पर्शिता है।

बाबू रामकृष्ण वर्मा—काशी-निवासी बाबू रामकृष्ण वर्मा बड़े ही साहित्यिक जीव थे। सरलता तथा मधुरता इनके जीवन मे कूट-कूट-कर भरी थी। इन्होने 'विरहा नायिका-भेद' नामक एक पुस्तिका लिखी

है, जो अल्पकाल होने पर भी साहित्यिक दृष्टि से बड़ी महत्त्वपूर्ण है। इस पुस्तिका मे विभिन्न प्रकार की नायिकाओ का भेद लिखकर उनका उदाहरण भोजपुरी भाषा मे विरहा छन्द मे दिया गया है।

वर्माजी कविता मे अपना नाम 'बलवीर' रखा करते थे। इनकी भाषा बडी सरस तथा सरल है। कहीं-कही सस्कृत की पदावली का भी इन्होने प्रयोग किया है। इस कारण भाषा मे विशेष मधुरता आ गई है। मध्या नायिका का यह वर्णन कितना सुन्दर तथा सटीक है :

"लजिया के बतिया मे कइसे कहो ए भइजी
जो मोरे बूते कहलो ना जाय।
पर के फगुनवां की सियली चोलियवा में
असो ना जोबनवा अमाय॥"

प्रवत्स्यत्पतिका का यह चित्रण कितना मार्मिक है :

"दुःखवा के बतिया नगीचवो ना अरावै
गुइयां हँसी खुसी रहेला हमेस।
बजुआ सरकि कर-कँगना भइल,
सुनि प्यारे क गवनवा विदेस।"

खण्डिता नायिका का वर्णन वर्माजी ने बड़ी ही मार्मिक शैली मे किया है। सचमुच यह निम्नाकित विरहा बडा ही सुन्दर बन पडा है :

"ओठवा के छोरवा कजरवा, कपोलवा
पै पिकवा के परली लकीर।
तोरी करनी समुझ के करेजवा फाटत
दरपनवा निहारो 'बलवीर'।"

साहित्यिक विरहो की चाशनी चखने के लिए रसिको को 'विरहा-नायिका भेद' अवश्य पढना चाहिए।

तेगअली—ये बनारस के रहने वाले मुसलमान थे। इनकी एक-मात्र रचना 'बदमाश-दर्पण' है, जिसमे बनारसी बोली की झाँकी देखने को मिलती है। ये बड़े ही मस्त जीव थे। काशी के कजली और कव्वाली

गाने वाले गवैयो के आप सरदार थे। आपके 'बदमाश-दर्पण' की भाषा बडी सजीव, मुहावरेदार और चलती हुई है, जिसमे काशी के लोगो की बोल-चाल का बड़ा ही सुन्दर चित्रण प्रस्तुत किया गया है। आँखो मे सुरमा लगाने की वजह की यह सफाई सुनिये :

"हम उनसे पूछली आखीं में सुरमा काहे बदे लगाइला।
उ हँस के कहलन छूरी पत्थर से चटाइला।।"

तेगअली की भाषा बडी चलती हुई तथा हृदय पर चोट करने वाली है। इनकी चहकती तथा फडकती हुई भाषा के एक दो उदाहरण ही पर्याप्त होगे :

"हम खर-मिटाव कइली हा रहिला चबाइ के।
भेंवल धरल वा दूध में खाजा तोरे बदे।।
जानीला आजकल में भनाभन चली रजा।
लाठी, लोहांगी, खंजर और बिछुआ तोरे बदे।।
कासी, पराग, द्वारिका, मथुरा औ वृन्दावन।
धावल करेले 'तेग' कन्हैया तोरे बदे।।"

दूधनाथ उपाध्याय—पं० दूधनाथ उपाध्याय का जन्म उत्तर प्रदेश के बलिया जिले के दयाछपरा नामक गाँव मे हुआ था। ये बहुत दिनो तक बैटिया (बलिया) मिडिल स्कूल के प्रधानाध्यापक रहे। इस पद पर रहते हुए आपने बडी कीर्ति प्राप्त की। परन्तु आपकी कीर्ति को अमर करने वाली आपकी भोजपुरी कविता है।

उपाध्यायजी ने बहुत पहले से ही भोजपुरी मे कविता लिखनी प्रारम्भ की थी। सन् १९१६ ई० मे प्रथम महायुद्ध के अवसर पर इन्होंने 'भर्ती के गीत' नामक पुस्तिका की रचना की थी, जिसमे ब्राह्मण, क्षत्रिय और अहीरो को लड़ाई मे भर्ती होने के लिए प्रोत्साहित किया गया था। इन जातियो को रण मे जाकर अंग्रेजो की ओर से लड़ने के लिए ललकारता हुआ कवि कहता है कि :

"हमनी का सब केहू ब्राह्मन, छतिरि होके,
रन में चलबि नाहिं तनिको डेराइबि ।
अबले चुकली बड़ बाउर कइलिहीं जा,
अब पुरुखनि के ना नइयां हँसाइबि ।।
जरमन दुहुट के नहट कइलां बिना,
अब ना मानबि बलु मरि मिटि जाइबि,
सगरे मुलुक ललकारि के चलबि अब,
'दूधनाथ' रन से ना पयर हटाइबि ।।"

उस समय देश मे अंग्रेजो का प्रभुत्व था । सभी लोग अंग्रेजी सत्ता की विजय के अभिलाषी थे । अतएव यह कवि पचम जार्ज की विजय की प्रार्थना भगवान् से करता हुआ कहता है कि :

"सिरि भगवान् राजा रामजी चरन परि
हाथ जोरि-जोरि सब केहू कहतानि जा ।
हमनी के बुधि दिही बल बउसाव दिही,
लड़े के सकति दिही वर मांगतानी जा ।
जरमन दुहुट के नहट कराइ दिहीं,
पंचम जारज जीके जीति चाहता नी जा ।
'दूधनाथ' अपना चरन में परेम दिही,
किरिया बनला रहे हाथ जोरत बानी जा ।"

उपाध्यायजी की दूसरी रचना 'भूकम्प-पचीसी' है, जिसमे १५ जनवरी १९३४ ई० के प्रलयंकारी भूकम्प का बड़ा ही सजीव चित्रण किया गया है । इनकी तीसरी पुस्तक 'गो-विलाप-छन्दावली' है, जिसमे गोरक्षा के महत्त्व का विशद वर्णन है। उपाध्यायजी ने सामाजिक कविताएँ भी बहुत सी लिखी हैं। आप अपने समय के प्रतिनिधि कवि थे । अतः प्रायः सभी सामाजिक और राजनैतिक घटनाओ का उल्लेख आपने अपनी कविता मे किया है। सेठ घनश्यामदासजी बिड़ला एक बार केन्द्रीय असेम्बली के चुनाव के लिए खड़े हुए थे। उस समय उपाध्यायजी ने जो कविता

बनाई थी उसकी एक कड़ी थी :

'बिड़ला बहादुर के ओट देत बानी जा' ।

अभी कुछ ही दिन हुए जब आपका देहावसान हो गया ।

बाबू अम्बिकाप्रसाद—आप बिहार राज्य (प्रान्त) के निवासी थे और आरा मे बहुत दिनो तक मुख्तारी करते थे। आपने शान्त-रस सम्बन्धी बहुत-से भोजपुरी गीतो की रचना की है, जिनमे रहस्यवाद की भी झलक देखने को मिलती है। इनकी निम्नांकित कविता मे रहस्यवाद की सुन्दर अभिव्यञ्जना हुई है :

**"देखली में सखिया एक कल के खेलवना रे,
पाँच पचीस कलवा लागल रे की।
तीन सौ साठि तामें लगली लकड़िया रामा,
नव सौ जोड़वा बान्धल रे की।
दुई रे सहेलिया मिलि खेलेली खेलनवा रामा,
तीनो रे खेलकवा तेहि सँगवा धवेला रे की।
नव रे महीनवा में बनेला खेलनवा रामा,
खेलवा मेटत देर ना लागेला रे की।
'अम्बिका'कहत बाड़े समुझि खेलु गोरिया रामा
खेलवा के भेदवा गुरु से पावेला रे की।"**

पं० महेन्द्र मिश्र—ये बिहार राज्य के छपरा जिले के मिश्रबलिया गाँव के निवासी थे। अभी हाल ही मे इनका देहावसान हुआ है। ये एक विशेष प्रतिभा-सम्पन्न व्यक्ति थे। अधिक शिक्षा न प्राप्त होने पर भी इनमे काव्य-रचना की दैवी शक्ति थी। इन्होने हजारो गीतो की रचना की है, जो 'पूर्वी' के नाम से प्रसिद्ध है। आपकी कविताओ, गीतो के अनेक सग्रह प्रकाशित हो चुके हैं, जिनमे 'महेन्द्र मंगल' अधिक प्रसिद्ध है। यद्यपि आपने जीवन में बहुत धन पैदा किया, परन्तु आपकी कीर्ति इन्हीं गीतो के कारण अजर-अमर रहेगी। आपने अपने गीतो मे सर्वत्र अपने नाम की छाप लगा दी हैं, जिससे स्पष्ट ज्ञात हो जाता है

कि ये महेन्द्र मिश्र की रचनाएँ है। जैसे :

"कहत *'महेन्दर मिसिर'* सुनु प्यारी सखिया ले,
तेरह बरिस बीति गइले हो राम।।"

महेन्द्र मिश्र (जो 'महेन्दर मिसिर' के नाम से अधिक प्रसिद्ध है) ने जो गीत लिखे हैं, वे 'पूर्वी' के नाम से विख्यात है। चूँकि ये गीत भोजपुरी प्रदेश के पूर्वी जिलो मे ही अधिक प्रचलित है, अतएव इनका नाम 'पूर्वी' पड गया है। भोजपुरी क्षेत्र मे यह गीत जितना अधिक लोकप्रिय है, उतना 'विदेसिया' को छोडकर दूसरा कोई गीत नही। यह बात ध्यान मे रखनी चाहिए कि 'पूर्वी' किसी गीतविशेष का नाम नही है, बल्कि ये वे गीत है, जो 'पूर्वी राग' या 'पूर्वी धुन' मे गाये जाते है। जिस प्रकार भिखारी ठाकुर नृत्य तथा नाट्य के विदेसिया सम्प्रदाय के प्रवर्त्तक है, उसी प्रकार इस पूर्वी गीत-सम्प्रदाय के जन्मदाता होने का श्रेय प० महेन्द्र मिश्र को प्राप्त है। मिश्रजी के द्वारा जो पूर्वी गीत लिखे गए थे, उनकी नकल पर आज हजारो की सख्या मे पूर्वी गीत लिखे जा रहे हैं। ये परवर्ती कवि इस विषय मे उन्हे अपना 'गुरु' मानते हैं और अपनी कविता मे 'महेन्दर गुरु' के नाम से इनका सादर उल्लेख करते हैं।

इन पूर्वी गीतो की सबसे बडी विशेषता यह है कि इनके गाने की लय बडी मधुर होती है। ये गीत द्रुत-गति से गाए जाते है। इन्हे गाते समय ऐसा जान पडता है कि एक शब्द दूसरे शब्द को बल देकर आगे बढ़ा रहा हो। इन गीतो की भाषा और भाव दोनो मे माधुर्य भरा पड़ा है। इनकी शब्दावली मे इतनी सरसता और द्रावकता रहती है, जिसका वर्णन करना कठिन है। कोकिल-कण्ठी स्त्रियो के मधुर स्वर से गाए जाते हुए इन गीतो को सुनकर हृदय द्रवीभूत हो जाता है। लेखक की यह धारणा है कि 'चैता' के गीतो को छोड़कर पूर्वी गीतो में जो मनो-रमता और द्रावकता है वह अन्य गीतो में नहीं।

महेन्द्र मिश्र जी वेश्याओ के गुरु थे अथवा वे उन्हे अपना गुरु

मानती थी। इस कारण जो वेश्याएँ किसी बारात मे नाचने-गाने के लिए जाती थी, वे अपने गुरु के इन 'पूर्वी' गीतो को अवश्य गाती थीं। यही कारण है कि इन गीतो का प्रचार भोजपुरी प्रदेश मे बहुत अधिक है। महेन्द्र मिश्र की कीर्ति को फैलाने का बहुत-कुछ श्रेय उनकी इन शिष्याओं को प्राप्त है।

पूर्वी गीतो का वर्ण्य विषय प्रायः विरह-विधुरा नायिकाओं का वियोग-वर्णन है। इसलिए इनमे करुण-रस का पुट प्रचुर परिमाण में पाया जाता है। किसी विरहिणी का अपने परदेसी पति के पास सन्देश भेजने का यह वर्णन सुनिए और यदि आपका दिल भरे, तो दिल खोलकर दाद दीजिए :

"पिया मोरे गइले रामा पुरुबी बनिजिया,
कि देके गइले ना, एक सुगना खिलौना।
कि देके गइले ना।

× × ×

उडत उडत सुगा गइले कलकतवा,
कि जाइके बइठे ना, ओहि सामी जी के पगिया।
कि जाइ के बइठे ना।
पगरी उतारी सामी जाँघ बइठवले,
कि कह सुगा ना, मोरे घर के कुसलतिया।
कि कह सुगा ना।
माई तोर कुटनी, बहिनि तोर पिसनी,
कि जइया कइलो ना, तोर दउरी दोकनिया।
कि जइया कइलो ना।"

रूप-गर्विता नायिका की यह निम्नाकित उक्ति कितनी सुन्दर है :

"सइयाँ मोरे गइले रामा पुरुबी बनिजिया,
से लेइहो अइले ना, रस बेनुली टिकुलिया।
से लेइ हो गइले ना।

टिकुली में साटि रामा, बइठली अटरिया,
से चमके लगले ना, मोर बेंदुली टिकुलिया।
से चमके लगले ना।"

महेन्द्र मिश्र के ये पूर्वी गीत रेकार्ड मे भी आ गए है और बड़े शौक से लोगो द्वारा सुने जाते हैं। नाटक के क्षेत्र मे जो प्रसिद्धि भिखारी ठाकुर को प्राप्त है, गीतो के क्षेत्र मे वही ख्याति प० महेन्द्र मिश्र को भी उपलब्ध है।

श्री रघुवीर शरण—श्री रघुवीर शरण जी 'बटोहिया' नामक गीत के अमर रचयिता है। भोजपुरी प्रदेश मे इस गीत का इतना अधिक प्रचार है कि बच्चे भी इसे गाते दिखाई पडते है। यदि 'बटोहिया' को इस प्रदेश का राष्ट्रीय गीत कहे, तो इसमे अत्युक्ति न होगी। खेतो मे काम करने वाले किसानो, स्कूल जाते हुए छात्रो तथा गाय चराने वाले अपढ चरवाहो के मुँह से भी यह गीत सुनने को मिलता है। इस गीत मे अखण्ड भारत का जो चित्र खीचा गया है, वह बडा ही सजीव और सुन्दर है। भारत माता का यह दिव्य स्वरूप कितना मनोरम है:

"सुन्दर सुभूमि भइया भारत के देसवा से,
मोरे प्रान बसे हिम खोह रे बटोहिया।
एक द्वार घेरे रामा हिम कोतबलवा से,
तीन द्वार सिन्धु घहरावे रे बटोहिया॥"

अखण्ड भारत का सुन्दर चित्रण करता हुआ मधुर राग मे कवि गाता है:

"गंगा रे जमुनवा के झगमग पनिया से,
सरजू झमकि लहरावे रे बटोहिया।
ब्रह्मपुत्र, पंचनद घहरत निसि दिन,
सोनभद्र मीठे स्वर गावे रे बटोहिया॥"

भारत की सास्कृतिक चेतना को जागृत करते हुए रघुवीर शरण जी कहते हैं:

"नानक, कबीरदास, शंकर, श्रीराम, कृष्ण,
अलख के गतिया बतावे रे बटोहिया।
विद्यापति, कालिदास, सूर, जयदेव कवि,
तुलसी के सरल कहानी रे बटोहिया।"

इस गीत मे राष्ट्रीय भावना कूट-कूटकर भरी हुई है। इस समय तो इसका और भी अधिक महत्त्व है। इस गीत से अनेक कवियो ने प्रेरणा और प्रोत्साहन प्राप्त किया है। श्री मनोरञ्जनप्रसाद सिनहा की 'फिरगिया' नामक सुप्रसिद्ध कविता इसी 'बटोहिया' की तर्ज पर लिखी गई है। कभी एक समय था, जब 'बटोहिया' का गीत घर-घर और गली-गली मे सुनाई पड़ता था, परन्तु आजकल भिखारी ठाकुर की 'विदेसिया' के आगे इसका रग कुछ फीका पड गया है। फिर भी इसकी लोकप्रियता बनी हुई है।

मनोरजनप्रसाद सिनहा—भोजपुरी के वर्तमान (जीवित) कवियो मे मनोरजनप्रसाद सिनहा का एक विशेष स्थान है। असहयोग आन्दोलन के दिनो मे आपकी 'फिरंगिया' नामक कविता बडी लोकप्रिय थी। भोजपुरी प्रदेश मे राष्ट्रीय जागृति उत्पन्न करने मे इस कविता का बडा हाथ था।

मनोरजनप्रसाद जी का जन्म बिहार राज्य के शाहाबाद जिले के डुमराँव नामक स्थान मे हुआ था। आप बहुत दिनो तक हिन्दू विश्वविद्यालय, काशी मे अँग्रेजी के अध्यापक थे। आजकल आप राजेन्द्र कालेज, छपरा के प्रिन्सिपल के पद पर प्रतिष्ठित है।

राष्ट्रीय आन्दोलन के दिनो मे आपका 'फिरगिया' गीत जातीय जागरण का महामन्त्र था। इस गीत मे अग्रेजी राज्य से उत्पन्न भारत की दुर्दशा का बडा ही सुन्दर चित्रण किया गया है, जिसकी पहली कड़ी इस प्रकार है :

"सुन्दर सुघर भूमि भारत के रहे रामा,
आजु उहे भइल मसान रे फ़िरगिया"

कवि की वाक्-वैखरी प्रस्फुटित होती है और वह आततायी ब्रिटिश शासन को सावधान करते हुए कहता है कि :

> **"चेत जाउ चेत जाउ भइया ते फिरंगिया लें,**
> **छोड दे अधरम के पन्थ रे फिरंगिया।**
> **दुखिया के आह तोर देहिया के भसम क दी,**
> **जरि-भुनि होइ जइबे छार रे फिरंगिया।"**

परन्तु आज यह राष्ट्रीय कवि मौन है। फिर भी वर्तमान शासन के विरोध मे कभी-कभी वह बोल ही उठता है। आजकल मनोरंजन जी की भोजपुरी कविताएँ आरा से प्रकाशित 'भोजपुरी' नामक पत्रिका मे प्रकाशित होती रहती है। परन्तु उनमे अब वह जोश नहीं है, जो 'फिरंगिया' वाली कविता मे था। क्रान्ति का यह कवि अब शान्ति का पुजारी हो गया है। वह लिखता है :

> **"का जाने राम कवन होई गतिया।**
> **बेरी-बेरी सोचीला कि फेरू ना करब अइसे,**
> **तबहूँ करीलें फेरू ओहसने गलतिया।**
> **सोचि-सोचि मनवा में होखेला गलानी,**
> **केकरा से अपना मन के कहीं बतिया॥"**

मनोरंजनप्रसाद जी खडी बोली हिन्दी मे भी अच्छी कविता करते हैं। इनकी खड़ी बोली की कुछ कविताएँ 'मुनमुन' नामक सग्रह मे मिल सकती है।

रामविचार पाण्डेय—उत्तर प्रदेश के बलिया जिले के कवि डॉ० रामविचार पाण्डेय का भोजपुरी कवियो मे एक विशेष स्थान है। आपने भोजपुरी भाषा मे देहाती जीवन को चित्रित करने मे कमाल हासिल किया है। आपकी कविताओ का सग्रह 'बिनिया बिछिया' के नाम से प्रकाशित हो चुका है।

आजकल आप भोजपुरी प्रदेश के वीर नेता बाबू कुँअरसिह पर एक नाटक लिख रहे हैं। पाण्डेयजी ने भोजपुरी के ठेठ शब्दो का

प्रयोग करते हुए भाषा मे विशेष माधुर्य लाने का सफल प्रयास किया है। इनकी 'अजोरिया' नामक कविता बड़ी प्रसिद्ध है, जिसमे भावो की सरसता के साथ ही शब्दो की कोमलता देखते ही बनती है :

> "टिसुना जागलि सिरि किसुना के देखे कै त,
> आधि रतिये खा उठि चलली गुजरिया।
> चान का नियर मुँह चमकेला रधिका के,
> चम-चम चमकेले जरी के चुनरिया।
> चकमक चकमक लहरि उठावे ओ मे,
> मधुरे मधुरे डोले कान के मुनरिया।
> गोखुला के लोग इत देखि के चीहइले कि,
> राति में अमावसा के उगली अँजोरिया।।"

कृष्ण से मिलने के लिए राधा जी अन्धेरी रात मे ही उनके पास चली जाती हैं। कृष्ण उन्हे आया देखकर आश्चर्यित होते है और उनसे पूछते है, तुम इस समय कैसे चली आई ? इस पर राधा उत्तर देती हुई कहती है कि .

> "हमके बोलावेलू तू अइलू हा कइसे हो,
> बड़ी भाकासावनि भइलि बा अन्हरिया।
> कसबा के राकस घूमत बडवार बाडे,
> गोखुला में कबे कबे होत बाडे चोरिया।
> सभा के ठगेल कृष्ण ! हमके भोराव जानि,
> हाथ हम जोड़ी ले करीले गोड़ धरिया।
> हृदया में जेकरा त तूँही बइसल बाड़,
> ओकारा खातिर ई अन्हरि अँजोरिया।"

प्रसिद्धनारायणसिह—आप बलिया जिले के सुप्रसिद्ध काग्रेसी नेता है। पहले आप मुख्तारी करते थे, परन्तु राष्ट्र की पुकार पर इस काय को छोड़ दिया। आप राष्ट्रीय आन्दोलन के सम्बन्ध मे कारा की यातना भी भुगत चुके हैं। आपने 'बलिया जिले के कवि और लेखक'

नामक पुस्तक लिखी है, जिसमे इस जिले के कवियो का सक्षिप्त विवरण प्रस्तुत किया गया है।

लेखक के अतिरिक्त आप एक कवि भी है। आपकी कविता मे भाव और भाषा का अच्छा सामञ्जस्य पाया जाता है। प० जवाहरलाल नेहरू सन् १९४५ ई० मे जब बलिया गये थे, उस समय आपने 'जवाहर-स्वागत' नामक कविता लिखी थी, जिसके प्रत्येक पद से ओज टपका पड़ता है। बलिया निवासियों की वीरता का परिचय देते हुए यह कवि कहता है कि :

'निरबल, निरधन, निरगुन, गँवार,
अलगा आपन बोली विचार।
कन-कन में जेकरा क्रान्ति बीज,
अइसन भोजपुरी टप्पा हमार।
इतिहास कहत पन्ना पसार।'

सन् १९४२ मे अग्रेजो द्वारा बलिया में किये गए अत्याचारो का वर्णन करता हुआ कवि लिखता है :

"गाँवन पर दगलन गन मशीन,
बेंतन सन मरलन बीन बीन।
बैठाई डाल पर नीचे से,
जालिम भोकलन खच खच सँगीन।।
बहि चलल खून के तेज धार।
घर घर से निकलल त्राहि-त्राहि,
कोना कोना से आहि आहि।
गाँवन गाँवन में लूट फूँक,
मारल, काटल, भागल पराहि।।
फिर गवन सुने केकर गुहार।"

ऊपर की पंक्तियो मे अग्रेजो के अत्याचार का कितना सजीव चित्रण किया गया है।

श्यामबिहारी तिवारी 'देहाती'—आप बिहार राज्य के बेतिया जिले के रहने वाले है और भोजपुरी मे सरस तथा सुन्दर कविताएँ लिखते हैं। आपकी कविताओ का संग्रह 'देहाती दुलकी' (भाग १, २, ३) के नाम से प्रकाशित हो चुका है। कविता मे आपका उपनाम 'देहाती' है और आप इसी नाम से अब प्रसिद्ध हैं। 'देहाती दुलकी' भाग १ में आपकी चुनी हुई चौदह कविताओ का संग्रह है, जिनमे ग्रामीण विषयों को लेकर कविता की गई है। 'उठल मास मधु आइल' शीर्षक आपकी कविता मे वसन्त-ऋतु मे प्रकृति के परिवर्तन का बड़ा ही सुन्दर चित्रण किया गया है।

'देहाती' जी की कविता श्रृङ्गार-रस-प्रधान है, जिसमे सम्भोग तथा विप्रलम्भ-श्रृङ्गार—दोनो ही का बडा सुन्दर वर्णन हुआ है। वियोग-श्रृङ्गार का यह चित्रण कितना सरस हुआ है :

"कइसे मानी उनुकर बतिया,
सुखले सूखल बीतल रतिया।
कहाँ जुड़ाइब आपन छतिया,
कतवा तुरले जाय।
भँवरा रसवा चुस ले जाय।"

'**सुखले सूखल बीतल रतिया**' इस पक्ति मे कितनी मार्मिक वेदना भरी पडी है।

बढ़ती हुई विरह-वेदना का यह चित्रण कितना स्वाभाविक और सरस बन पड़ा है :

"अब ही लें हम काँपतानी,
पलकन पानी ढाँपतानी।
आग लगा के तापतानी,
तेलवा डल ले जाय।
भँवरा रसवा चुस ले जाय॥"

श्रृङ्गार-रस के वर्णन के अतिरिक्त 'देहाती'जी ने ग्रामीण जीवन

का भी बड़ा सजीव चित्रण किया है। जाडे के दिनो मे गरीबो को कितना कष्ट होता है, इसका सजीव वर्णन इन पंक्तियो मे पढिए :

"गरमी त भरसक कढि जाला,
जाड हमनिए पर बउराला।
देह उघारे सिसकत पाला,
कवन कही हम बात भइया।
सूख गइल बरसात भइया।

'देहाती'जी की कविता मे हास्य-रस का पुट भी कुछ कम नहीं है। सावन के मन-भावन महीने मे अपनी प्यारी प्रियतमा को भला ससुराल मे कौन छोड सकता है ? इस सम्बन्ध मे आपकी हास्य-रस-मिश्रित यह कविता सुनिए :

"सावन मास बहे पुरुआ,
जानि केहू के घूटे मिलाबल जोड़ी।
का कही दोसर के बा इहाँ,
अब जे इ सुतार में बाँगर मोडी।
आइब आजु जरूर मुनेसर,
भाई के माँग के हींछल घोड़ी।
बोच हुई हमहूँ त पुरान उ,
के ससुरारि में मेहर छोडी।"

आपकी 'का का देखनी' शीर्षक एक दूसरी कविता है, जो हास्य-रस से पूर्ण है। इस कविता की दो पक्तियाँ इस प्रकार हैं :

"आगे टेबुल आइल बूझनी नूधके पढ़वि।
आहि बाल ! ई का !! छूरी अवरू काँटा देखनी।।"

इस प्रकार 'देहाती'जी की कविता मे शृङ्गार और हास्य का बड़ा मधुर मिलन हुआ है।

कविवर 'चंचरीक'—चचरीकजी गोरखपुर जिले के निवासी हैं। आप बड़े ही मस्त जीव और स्वच्छन्द प्रकृति के व्यक्ति हैं। आपकी

रचना 'ग्राम-गीताञ्जलि' है, जो गोरखपुर से प्रकाशित हुई है। भोजपुरी समाज मे विवाह के अवसर पर गाली गाने की प्रथा है। 'चचरीकजी' ने इस बुराई को दूर करने के लिए इन अवसरो के उपयुक्त राष्ट्रीय गीत बनाए है। इस प्रकार आपने नये लोक-गीतो को लिखकर जनता मे राष्ट्रीय भावना के प्रचार का प्रशसनीय प्रयत्न किया है। भोजपुरी के प्राचीन छन्दो मे नया भाव भरने का आपका प्रयास सर्वथा स्तुत्य है। ग्रामीण छन्द मे लिखी गई राष्ट्रीय भावनाओ से भरी यह कविता पढिये :

'झुर झुर बहति बयरिया न नदिया हो,
फर-फर डोले मोर चरखवा हो जी।
सुनु-सुनु हमरो बचनिया भउजिया हो,
हमहू सखवा कतबै चरखवा हो जी।।"

प० मोतीलाल नेहरू की मृत्यु पर यह कवि कहता है कि :

"भारत के नइया के डारि मझधारवा में,
असमय चलि गइले मोतीलाल नेहरू।
कइसे के पार होइ है देसवा के नइया रे,
पतवार रहलै रे मोतीलाल नेहरू।।"

'चचरीक'जी ने सोहर तथा जॉत के गीत भी लिखे हैं जिनमे राष्ट्रीय विचार-धारा का प्रवाह देखते ही बनता है। इस कवि ने एक नवीन दिशा मे नया प्रयास किया है परन्तु इन्हे इस कार्य मे विशेष सफलता नही मिल सकी है।

रणधीरलाल श्रीवास्तव—आपका जन्म बलिया जिले के 'सोन-वर्सा' नामक गॉव मे हुआ था। आप भोजपुरी के एकान्त-सेवी कवि हैं। प्रचार या प्रोपेगेण्डा से दूर रहते हुए आप भोजपुरी की काव्य-साधना मे निरत रहते हैं। आपने भोजपुरी मे बरवै छन्द मे कविता लिखने मे सफलता प्राप्त की है। आजकल आज 'बरवै शतक' नामक काव्य-ग्रन्थ लिखने में लगे है। लेखक की यह धारणा है कि अवधी भाषा की भॉति

भोजपुरी भी बरवै छन्द के लिए बडी ही उपयुक्त है। इसका प्रत्यक्ष प्रमाण रणधीरलालजी की कविता है।

शुक्लाभिसारिका का उनका यह वर्णन कितना सजीव है :

"टहटहि उगलि अँजोरिया, ठहरे ना आँखि।
पहिरि चलेली लुगवा बकुला पाँखि ॥"

पति के वियोग मे किसी विरहिणी का हृदय पिघलकर आँसुओ के रूप मे निकल रहा है। कवि कहता है :

"विरह अगिनिया छतिया धधके मोर।
गलि गलि बहेला करेजवा अँखियन कोर।"

यह बरवै बिहारी के निम्नांकित दोहे के ऊपर लिखा हुआ जान पडता है :

"तच्यौ आँच अति विरह की, रह्यौ प्रेम रस भीज।
नैनन के मग जल बहे, हियो पसीज पसीज ॥"

गोपियो के साथ कृष्ण की क्रीड़ा का यह वर्णन कितना मधुर तथा मर्मस्पर्शी है :

"होत पराते गहली जमुना तीर।
जानि अकेले रोके ले बावन वीर।
माँगेला गोरस आइल कमरी ओढ।
तापर रार बेसाहेला गगरी फोड ॥
काहे छीन-झपटा करेल दहिया चोर।
गोडवा के धोवन वा, पइब ना मोर ॥"

'अशान्त'—ये अपने इसी उपनाम से प्रसिद्ध हैं। आपकी कविता 'भोजपुरी' नामक पत्रिका मे प्रकाशित हुआ करती है। इनकी कविता की भाषा प्राञ्जल तथा भाव उच्चकोटि के होते हैं। 'अशान्त' की कविता मे जोर भी है और जोश भी। आपकी 'श्मसान' नामक कविता बड़ी भावपूर्ण है। श्मसान को देखकर कवि कहता है कि यह जीवन की अमर कहानी को सुनाता है। धूम्राच्छादित आकाश मानो मुँह फेरकर यह

कह रहा है कि श्मसान शव के व्याज से अपने भाग्य को जला रहा है :

"हहरी जमुनियाँ के झगमग पनियाँ,
अमर जिनिगिया के गावेला कहानियाँ।
कहेला धुँआवल मुँह फेरि आसमानवाँ,
अपने करमवा जलावेला मसानवा ॥"

श्मसान मे कितने वीर पुरुषो की लाशे जलती हैं जिन्होने संसार में अलौकिक कार्य किये थे। कितनो ने यमराज के आसन को भी अपने पराक्रम से हिला दिया था। परन्तु आज वे भी श्मसान मे जलते हुए दिखाई देते है :

"जवने जिनिगिया के सँसरी-पवनवा,
दिहले हिलाई यमराज के आसानवाँ।
ओहिजा भर ले करवटिया जमानवा,
अमर परानवाँ जलावेला मसानवाँ ॥"

अशान्तजी भोजपुरी के नवयुवक कवि हैं। आशा है वे इसी प्रकार अपनी कविता से इसके भण्डार को भरते रहेंगे।

पं० महेन्द्र शास्त्री—शास्त्री जी बिहार राज्य के छपरा जिले के निवासी है। आप पुराने साहित्य-सेवी तथा कवि है। कुछ दिन पहले आपने पटना से 'भोजपुरी' नामक पत्रिका प्रकाशित की थी परन्तु वह अनेक कारणो से बहुत दिनो तक नही चल सकी।

आपकी कविता मे स्वाभाविकता की मात्रा अधिक पाई जाती है। इसके साथ ही इसमें हास्य का पुट भी कुछ कम नही रहता। आपकी एक कविता का शीर्षक है—'मासन मे पूसे बदमास।' इसमे आपने पूस मास मे होने वाली कठिनाइयो का बडे ही सुन्दर शब्दो मे वर्णन किया है। कही कौआ जाडे के मारे ठिठुरा जा रहा है, तो कहीं ठडक के मारे पानी काटने दौडता है। आगे की पक्तियो मे गॉव का दृश्य कितनी सुन्दर रीति से अकित किया गया है :

"कौआ कँकुरल गाँव गाँव,
कहवाँ गइल काँव काँव।
दिन उठला तक हूआँ हूआँ,
सगरे जानू धूआँ धूआँ।
नदी पोखरा ताल काल,
एक डुबकिये देह हेवाल।
पानी जानू दउरे काटे,
भीड नइखे घाटे घाटे।
गगरा भरल उठाइले,
सिर पर ना भभकाइले।"

आगे कवि कहता है :

"रोगे दूनू जाड़ जड़ैया,
दूनू जानू जउँआँ भइया।
रूई धूँई बुई दवाई,
ना त रोगी मरिये जाई॥"

रामनाथ पाठक 'प्रणयी'—भोजपुरी के आधुनिक कवियो मे प० रामनाथ पाठक 'प्रणयी' का एक विशेष स्थान है। इनकी कविता मे हमे नवीन चेतना का जन्म दिखाई देता है। इन्होने 'कोइलिया' तथा 'सितार' दो काव्य-ग्रन्थो की रचना की है, जो अभी प्रकाशित हुए हैं। 'प्रणयी' की कविता की विशेषता है देहाती प्रकृति का सजीव चित्रण। इन्होने ग्रामीण दृश्यो का जो चित्र प्रस्तुत किया है वह बड़ा ही सरस तथा हृदयस्पर्शी है। देहाती वातावरण को अपनी कविता मे उपस्थित करने मे इन्होने पूर्ण सफलता प्राप्त की है। 'बधार' शीर्षक इनकी कविता की कतिपय पंक्तियाँ इस प्रकार हैं :

"धनवाँ प चढ़ल धनि ! सोनवा के पनियाँ।
टबियो प रसे रसे अँहठे जवनियाँ।

ठिठुरल देहिया, डँडेरे प किसनवाँ।
भोरही देखाई देला हुलसल मनवाँ।
देखिके बरेला मन कतहू कटनियाँ।
कतहू लोभाला मन देखि खरिहनियाँ।
कहुँ पँजिआवल, बान्हल रे, बोझवा के बहरवाँ।
गह गह रे आजु लागेला बधरवाँ॥"

'प्रणयी'जी ने शरद् का वर्णन करते समय बडी सुन्दर पद-शय्या का प्रयोग किया है। यह वर्णन ग्रामीण वातावरण के कितना उपयुक्त है :

"आइल शरद सुहावन सजनी!
आइल शरद सुहावन!
साफ भइल आकाश, कास-कुश कुमुद फुलाइल,
उचटल नींद, रातके सपना होत परात भुलाइल।
चमक रहल झक-झक पानी में चम-चम चान लुभावन,
आइल शरद सुहावन सजनी!
आइल शरद सुहावन।"

(ख) गद्य

प्रायः ऐसा देखा जाता है कि संसार के सभी साहित्यो मे पद्य का जन्म पहले होता है और गद्य का उसके उपरान्त। तमसा के तट पर निवास करने वाले महर्षि की रस-सिद्ध वाणी जब क्रौञ्च-वध को देखकर प्रथम बार स्खलित हुई थी तब उसने पद्य का ही रूप धारण किया था। कहने का तात्पर्य यह है कि साहित्य मे कविता की सृष्टि पहले होती है और गद्य की बाद मे। सस्कृत तथा हिन्दी का विस्तृत साहित्य इस विषय का प्रमाण है। भोजपुरी साहित्य के सम्बन्ध मे भी यही बात समझनी चाहिए। भोजपुरी मे सन्त-साहित्य का पद्य मे निर्माण तो बहुत पहले से हो रहा था, परन्तु इसके गद्य का प्रारम्भ बहुत बाद मे हुआ।

भोजपुरी मे कोई प्राचीन गद्य-ग्रन्थ नही उपलब्ध होता और न कोई साधन ही मिलता है जिससे उसके प्राचीन रूप का ज्ञान प्राप्त हो सके। हाँ कुछ कागज-पत्रो मे अवश्य भोजपुरी-गद्य की झाँकी हमे देखने को मिलती है, परन्तु ये बहुत प्राचीन नही है। आजकल जो भोजपुरी-गद्य उपलब्ध होता है उसे प्रधानतया तीन भागो मे विभक्त कर सकते है—

(१) लोक-कथाओ मे प्राप्त गद्य।

(२) प्राचीन कागज-पत्रो मे सुरक्षित गद्य।

(३) आधुनिक पुस्तको मे प्रयुक्त गद्य।

भोजपुरी लोक-कथा-सम्बन्धी अभी कोई पुस्तक प्रकाशित नहीं हुई है। इन पक्तियो के लेखक ने सैकडो लोक-कथाओ का सग्रह किया है, जिनके अध्ययन से भोजपुरी गद्य का स्वरूप जाना जाता है। इन कथाओ की भाषा-शैली बड़ी सुन्दर तथा सरस है तथा पाठको को ये बलात् आकर्षित कर लेती हैं। इनकी भाषा चलती तथा मुहावरेदार है। सरलता इनमे कूट-कूटकर भरी हुई है। इससे सर्वसाधारण जनता भी इन्हे आसानी से समझ सकती है। इन बातो को स्पष्ट करने के लिए लोक-कथाओ मे प्राप्त गद्य के केवल एक-दो ही उदाहरण पर्याप्त होगे :

"हमार लाल अभी साझि के विहान ना भइल, अभी तोहार पियरी मइल ना भइल अवरू तू जाये के कहत बाड़। ××× लछटकही ओकर जाति ना लिहलसि उ राति दिन हाड़ तूरि के घर के काम करे।"

"रानी इ सोचि के मन मारि के उदास बइठलि रहली। तब संकर सुग्गा रानी से पूछलसि कि ए रानी ! आजु का गत ह कि तू उदास बइठल बाड़ू। रानी आपन सब दु.ख कहि सुनवली। सुग्गा कहलसि कि ए रानी ! कह त हम उड़त-उड़त राजा के पास जाइ के ताहार दुःख कहि सुनाईं। रानी कहली कि ए हमार कर सुग्गा ! भलाई अवरू पूछि-पूछि।"[1]

१. लेखक का निजी संग्रह।

भोजपुरी गद्य-सम्बन्धी कोई प्राचीन हस्तलिखित प्रति आज उपलब्ध नही है। अतः इसके प्राचीन रूप के दर्शन राजघरानो, रईसो, जमीदारो तथा प्रतिष्ठित व्यक्तियो के यहाँ सुरक्षित कागज़-पत्रो मे ही हमे होते है। भोजपुरी प्रदेश मे जो सुलहनामे, दस्तावेज तथा बीजक लिखे जाते थे—वे प्रायः भोजपुरी गद्य मे ही लिपिबद्ध किये जाते थे, परन्तु इन कागज-पत्रो का सग्रह प्रकाशित रूप मे अभी देखने को नहीं मिला है। ये कागज-पत्र आज भी राजाओ, रजवाड़ो तथा जमींदारो के घरो मे बेटनो मे बँधे पडे हुए है। डॉ० उदयनारायण तिवारी एम० ए०, डि० लिट्० तथा श्री दुर्गाशकर प्रसाद सिह के उद्योग से इनमे से दो-चार कागज-पत्रों का प्रकाशन भी हुआ है। भोजपुरी गद्य के प्राचीन रूप को जानने के लिए ये दान-पत्र बहुत ही उपयोगी है।

नीचे एक दान-पत्र की प्रतिलिपि दी जाती है जो आज से २७० व ं पूर्व का है। इसका काल सम्वत् १७३५ विक्रमी है। इसमे महाराज कुमार बाबू कनकसिह देव द्वारा श्री बुधी राम पाण्डे को दान स्वरूप कई गाँवो को देने का उल्लेख है :

"गंगा जी के तीर वहिन प्रीति शोश्ती श्री चक्र नारायणत्यादि विविध विरुदावली विराजमान मानोन्त श्री महाराज कुमार बाबु कनक शीघ्रदेवानां शदा समर विजैना पित्रिदत्त श्री बुधीराम पाण्डे के *दिहल* **मौजे चतर शीवार कै** *दिहल* **धापमारी नाम बुधीरामपुर शलल [शकठ शपथचतुर शीवा अवछिन के** *दिहल* **शकलपश्री······ ·········कुशहस्त** *दिहल* **शवत १७३५ शकै फाल्गुन वदी १ बार शुभवासरेमोजम मैरवा ········ ······दशखत हरीनन्दन दाश।"**

यह दान-पत्र अनेक दृष्टियो से महत्त्वपूर्ण है। इसकी भाषा पर विचार करने से यह स्पष्ट ही पता चलता है कि यह संस्कृत-मिश्रित है। साथ ही इसमे समस्त पदावली का प्रचुर प्रयोग किया गया है। 'विविध-विरुदावली विराजमान मानोन्त' इस पदावली से हमारे कथन की पुष्टि पूर्णतया होती है। भोजपुरी 'दिहल' (दिया) क्रिया-पद का इस दान-

पत्र मे, भिन्न-भिन्न स्थानों मे चार बार प्रयोग किया गया है। मुगलो के समय मे तथा अंग्रेजी राज्य-काल मे कचहरी की भाषा फारसी और उर्दू होने पर भी इस दान-पत्र की भाषा सस्कृत-मिश्रित भोजपुरी है। इस दान-पत्र मे 'स' को 'श' लिखने की प्रवृत्ति दिखाई पडती है। इसीलिए 'स्वस्ति' शब्द 'शोश्ती' तथा 'सदा समर विजयिना को' 'शदा शमर बिजैना' लिखा गया है। इसी प्रकार 'कुशहस्त' को 'कुशहश्त' रूप प्रदान किया गया है ।

आधुनिक भोजपुरी गद्य का स्वरूप हमे वर्तमान लेखको की कहानियो तथा नाटको मे उपलब्ध होता है। 'भोजपुरी' पत्रिका मे आजकल जो लेख प्रकाशित हो रहे है उनमे भी इसके स्वरूप के दर्शन हमे होते है। इस भाषा के गद्य का विकास धीरे-धीरे हो रहा है। आशा है कि शीघ्र ही पद्य की ही भॉति इसका गद्य भी प्रौढता को प्राप्त कर लेगा।

कहानी

श्री अवध विहारी 'सुमन' ने 'जेहल क सनदि' नामक कहानियो की एक सुन्दर पुस्तक लिखी है। सम्भवतः यह आधुनिक कहानियो की सर्वप्रथम पुस्तक है। इस मे 'सुमन' जी के द्वारा लिखित दस कहानियॉ सग्रहीत है। डा० उदय नारायण तिवारी ने इस पुस्तक की भूमिका मे लिखा है कि "**भोजपुरी जनता की ठसक, रोबदाब, रागद्वेष आदि को यह पहली बार अपनी वाणी का उचित परिधान मिला है।**" वास्तव मे इन कहानियो मे भोजपुरी समाज के विभिन्न अगो का चित्रण बड़ी सुन्दरता से किया गया है। 'मलिकार'-शीर्षक कहानी मे तिलक की दूषित प्रथा का उल्लेख किया गया है। 'आतमघात' नामक कहानी मे दुनिया के झझटो से परेशान होकर बलराम नामक युवक आत्महत्या कर लेता है। आजकल साधु और महात्मा का वेश बनाकर घूमने वाले तथा-कथित सन्त कितने दुराचारी तथा भ्रष्ट हो गए हैं इसका चित्र 'मवनी बाबा' नामक कहानी मे हमे देखने को मिलता है। इसी प्रकार 'कत-

वारू दादा' मे वृद्ध विवाह का नग्न चित्र उपस्थित किया गया है।

'सुमन' जी की कहानियो की भाषा बडी सीधी और सरल है, जिन्हे पढकर उनके भाव को समझने मे तनिक भी कठिनाई नही होती। आपके वर्णन द्वारा देहाती दुनिया का चित्र आँखो के आगे स्पष्ट दिखाई पड़ने लगता है।'आतमघात' शीर्षक कहानी का यह उद्धरण देखिए :

"जामुना घाट पर फूस का पलानी में बइठल बलिराम आपन दुर-दसा आ दुनियाँ क हाल देखिके झंखत रहलन। रहि-रहि के उनका मन में उठे कि गरीब भइला से बढि के दूसर कवनो भारी पाप नइखे। × × × बलिराम समाज के एह पाप के फल खुद भोगत रहलन 'आगा नाथ ना पीछे पगहा' वाली दसा भइलि चाहति रहे। चचेरा भाई गरीब जानि के उनके फरका कइ दिइले रहलन। घर में उनकर मॅहतारी, मेहरारू आ ऊ तीन बेकति के पूँजी रहे। डेढ बिगहा खेत हीसा मिलल। ऊ हो दुइ बरिस का खाहल-पीयल आ पढ़े का खेवा खरचा में रेहन धराई गइल"।

'सुमन' जी की कहानियो मे भोजपुरी कहावतो का प्रयोग प्रचुर मात्रा मे हुआँ है। आपकी प्रत्येक कहानी मे अनेक कहावते भरी पडी है जिनसे भाषा बड़ी रोचक हो गई है। यहाँ कुछ ही उदाहरण पर्याप्त होगे :

"अम्बर पर उनचास बयारि।
विपति के झोका एक ओर ले ना आवे।
बेल तर के मारल बबूर तर।
अनकर आटा अनकर घीव, साबस साबस बाबाजी।
रोगिया चाहे तवन बयदा बतावे।"

इनकी भाषा मे मुहावरो का प्रयोग भी कुछ कम नही हुआ है। इस प्रकार 'सुमन' जी की भाषा सीधी, सादी तथा चलती हुई है।

श्रीमती राधिकादेवी श्रीवास्तव 'विशारद'—भोजपुरी के कहानी लेखको मे श्रीमती राधिकादेवी श्रीवास्तव का नाम अग्रगण्य है। इनकी

कहानियों का संग्रह अभी तक पुस्तकाकार प्रकाशित नहीं हुआ है। 'भोजपुरी' पत्रिका में इनकी इधर अनेक कहानियाँ छपी है, जिनमें 'पोल' 'प्रोफेसर', 'मन्तर' और 'होरी-ह-अ-अ' आदि कहानियाँ प्रसिद्ध है। राधिकादेवी की कहानियों में हास्य तथा व्यग्य का पुट अधिक पाया जाता है। साथ ही यह हास्य उच्च कोटि का है। आपकी 'पोल' शीर्षक कहानी बड़ी सुन्दर बन पड़ी है जिसमें जगमोहन नामक ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करने का ढोंग करने वाले किसी व्यक्ति का चन्दा से अनुचित प्रेम दिखलाया गया है। प्रेम में मनुष्य कितना कामान्ध हो जाता है यह बात बड़ी सुन्दर रीति से चित्रित की गई है। जगमोहन जब चन्दा से प्रथम-मिलन के लिए जाता है। उस समय का यह चित्रण कितना सुन्दर है :

"जग मोहन मोटर से उतर के कचहरी के सड़क पकड़, अभी तनिके दूर गइल रहलन कि ऊ झखाड़ नीम के फेड भेंटा गइल। घडघड़ा के सामने के दुआरी पर पहुँच गइले आ साँय साँय क के चन्दा! चन्दा! गोहरावे लगले आ रहि-रहि के केवड़ियो खटकावे लगले। मन त खुसी से फूलि के कुप्पा यइल रहे, अब फूटे तब फूटे। केवाड़ी खुलि में देर होत रहे आ इनका दिल में रेल दडरत रहे। बडी देर के बाद केवाड़ी खोले के आहट मिलल। जगमोहन खुसी के मारे दूनो आँख मूँदि लेलन, आ केवाड़ी खुलते भरि अँकवारी चन्दा के धके कहे लगलन—"प्यारी हम पहुँच गइलीं।"

"बाकी त हनिकर धोयान टूटि गइल जब एक साथ चार-पाँच आदिमी ताली पीट-पीट के हँसत सुनाइल आ आँख खोलते देख लें कि चन्दा के जगह खदेरन के भरि अँकवारी धइले बाडन।"

उपर्युक्त उद्धरण में हास्य का पुट कितना गहरा है। लेखिका ने ऐसी परिस्थिति पाठकों के सामने उपस्थित कर दी है जिसे पढकर हँसे बिना कोई नहीं रह सकता। इसी प्रकार 'प्रोफेसर' शीर्षक कहानी में भी राधिका-देवी जी ने बड़ी सुन्दरता से हास्यरस की सृष्टि की है। हेडमास्टरनी को

किस प्रकार से अन्त मे बेवकूफ बनाया गया है यह देखते ही बनता है। 'मन्तर' नामक आपकी कहानी भी बड़ी सुन्दर बन पड़ी है। 'होरी-ह-अअ' कहानी मे तिवारीजी का हुलिया पढकर हँसी को रोकना बड़ा कठिन हो जाता है :

भांग के निसा में (तिवारी जी के) मलकत लाल आंख, रसगुल्ला अइसन नाक, बीच में फारल पावरोटी अइसन ओठ, जम्हार अइसन जकड़ल मोछ, गिरगिट अइसन गरदन आ सिरकिट अहसन देह।

राधिकादेवी की कहानियो मे अपनी निजी विशेषता है, जो भोजपुरी के अन्य कहानी-लेखको मे नहीं पाई जाती। 'सुमन'जी की कहानियो मे सादगी है, परन्तु इनकी कहानियो मे हास्य तथा व्यग्य का पुट होने के कारण बडी सरसता आ गई है। इनकी भाषा बडी चलती और मुहावरेदार है। इनके कहने का ढग भी अपना अनूठा है। यदि राधिका-देवी जी की कहानियोका सग्रह प्रकाशित हो जाय तो उससे बहुत बड़े अभाव की पूर्ति होगी।

(ग) नाटक

नाटक-रचना मे भोजपुरी भाषा का प्रयोग करने का सर्वप्रथम श्रेय पं० रविदत्त शुक्ल को प्राप्त है जिन्होने अपने 'देवाक्षर चरित' नामक नाटक की रचना सन् १८८४ ई० मे की थी। जैसा कि इसके नाम से विदित होता है यह ग्रन्थ नागरी लिपि के प्रचार के समर्थन मे लिखा गया था। जिस समय यह नाटक लिखा गया था। उस समय कचहरियो मे उर्दू भाषा तथा फारसी लिपि का बोल-बाला था। हिन्दी भाषा एवं नागरी लिपि घृणा की दृष्टि से देखी जाती थी। अतः कचहरियो मे नागरी लिपि को स्थान देने की अपील इस पुस्तक मे की गई है।

यह नाटक प्रहसन है, जिसमे जन-मन का अनुरंजन किया गया है। परन्तु इसके साथ ही तत्कालीन सरकारी विभागो में प्रचलित बुराइयाँ—जैसे घूसखोरी आदि को दिखलाकर जनता को शिक्षित बनाने का भी

प्रयत्न किया गया है। इस नाटक की भाषा खड़ी बोली है, परन्तु इसके तीसरे और चौथे अंक भोजपुरी भाषा में लिखे गए हैं। इसकी भाषा सरल और सुबोध है। भोजपुरी के ठेठ शब्दों का प्रयोग इसमें प्रचुर परिणाम में किया गया है। बीच-बीच में भोजपुरी कहावतों का प्रयोग बड़ी सुन्दर रीति से हुआ है। जिससे भाषा में बड़ा सौन्दर्य आ गया है। एक देहाती की यह उक्ति कितनी सुन्दर है :

"रउवाँ रुपया वाला बाटी अदालत लड़ब, पै हमन पाँच के तो एक जून पेट भर खहहु के ठिकाना नाही बाय, अदालत कहाँ से लड़ब। पहिले 'एक कवर भीतर तब देवता औ पित्तर' एक ओर भगवानो कै कोप हमरन पर बा कि कह साल सै सूखे पड़ल जात बाय। उ कहावत ठीक जान परैला कि 'निबलन कै दैबो सतावै लै।"

ऊपर के उद्धरण में भोजपुरी के ठेठ शब्दों का प्रयोग हुआ है। जैसे बेला या समय के अर्थ में 'जून' का प्रयोग। यह शब्द ठेठ भोजपुरी का है। इसके साथ कहावतों का सन्निवेश भी बड़ी सुन्दर रीति से किया गया है। 'एक कवर भीतर तब देवता औ पित्तर' यह भोजपुरी की सुप्रसिद्ध कहावत है, जिसका अर्थ 'भूखे भजन न होय गुपाला' के अर्थ में किया जाता है।

भोजपुरी प्रदेश के निवासी किसी प्रकार अपना सब-कुछ बेचकर भी मुकदमा लड़ने के लिए तैयार रहते हैं। इसका उल्लेख नीचे के अवतरण में किया गया है :

"हाइ कोरट बिलायत, जहाँ तक होई घर दुआर बेंचिकै, सतुआ नून खाइकै, मुकदमा लड़ल जाई।"

फारसी लिपि के दोषों को बतलाता हुआ इस नाटक का लेखक अपने एक पात्र के मुँह से कहलवाता है कि :

"दोहाई साहब कै, सरकार हमनी के हाकिम औ माँ-बाप बराबर हईं। जो सरकार किहाँ से नियाव ना होई तो उजड़ जाब। देखी जवन ई फारसी में खाना-पूरी होत बाय एमें बड़ा उपद्रव मची। हमरा सीर

के सरहमैथ्यन लिखल गइल बा।"

इसलिए नागरी लिपि का कचहरियो मे प्रयोग करने की वकालत करता हुआ लेखक कहता है कि :

"इब्तदाई तालीम कभी कामयाब नही हो सकती, जब तक नागरी अक्षर कचहरियों में न जारी किये जायँ।"

यह 'देवाक्षर-चरित' नामक नाटक यद्यपि बहुत छोटा है परन्तु यह अनेक दृष्टियो से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। जहाँ तक इन पंक्तियो के लेखक को ज्ञात है यह भोजपुरी भाषा का सर्वप्रथम नाटक है। इसकी सबसे बड़ी विशेषता यह है कि आज से लगभग ७० वर्ष पूर्व इस नाटक के रचयिता ने नागरी लिपि को कचहरियो मे स्थान दिलाने का प्रयास किया था। सम्भवतः इस दिशा मे यह प्रथम प्रयत्न था।

राहुल-नाटक-चक्र

महापण्डित, त्रिपिटकाचार्य राहुल सांकृत्यायन ने भोजपुरी भाषा मे अनेक नाटको की रचना की है, जिनके नाम निम्नांकित हैं— (१) नइकी दुनिया, (२) ढुनमुन नेता, (३) मेहरारून के दुरदसा, (४) जोंक, (५) इ हमार लड़ाई, (६) देश-रक्षक, (७) जपनिया राछछ, (८) जरमनवा के हार निहचय। ये नाटक समाजवादी दृष्टिकोण को लेकर लिखे गए है। इनके द्वारा समाजवाद के सिद्धान्तो का प्रचार करने का लक्ष्य दिखाई पड़ता है। कुछ नाटको मे भोजपुरी समाज का चित्रण बड़ी सुन्दर रीति से किया गया है। 'नइकी दुनिया' और 'मेहरारून के दुरदसा' ऐसे ही नाटक हैं जिनमे विभिन्न सामाजिक दृश्य दिखलाये गए हैं।

बूढ़ी सास नवागत बहू को किस प्रकार गाली देती और तंग करती है इसका सजीव चित्रण 'नइकी दुनिया' मे किया गया है। भारत के स्वतन्त्र होने पर (यह नाटक सन् १९४७ ई० के पहले लिखा गया था) इस देश मे सुख और समृद्धि का राज्य होगा। इसका मनोरम

चित्र दिखलाया गया है। भोजपुरी समाज मे स्त्रियो को कौन-कौन-से कष्ट भुगतने पड़ते हैं, युग-युग से पुरुष जाति ने स्त्रियो पर कितना भयकर अत्याचार करके उन्हे घर मे बन्दी बना रखा है, उन्हे किस प्रकार अधिकार से वचित कर रखा है—इन सभी विषयो का वर्णन राहुलजी ने अपनी कुशल लेखनी से किया है। पुत्र तथा पुत्री एक ही माता-पिता से उत्पन्न होते हैं, परन्तु पुत्र-जन्म के अवसर पर हर्ष मनाया जाता है परन्तु पुत्री का जन्म दुःखदायी होता है। इस महान् भेद-भाव को लक्षित करके राहुलजी कहते हैं कि :

"एके माई बपवा से एक ही उदरवा में
दूनो के जनमवा भइल रे पुरुखवा।
पूत के जनमवा में नाच आ सोहर होला,
बेटि के जनम परे सोग रे पुरुखवा॥"

पुरुष किस प्रकार वेश्याओं को घर मे रखकर अपनी ब्याहता, सती, साध्वी, धर्मपत्नी को मारते-पीटते है इसका सजीव चित्रण निम्नाकित पंक्तियो मे किया गया है—

"अँखियै के देखते पतुरिया ले रखले बा,
मार गाली देला दिन-रात रे पुरुखवा।
ओहि रे खसुरवा मरदवा के किछु नाहीं,
तिरिया के भकसी झोकावे रे पुरखवा॥"

'जोक' नामक नाटक मे समाज का शोषण करने वाले जितने लोग हैं—जैसे जमींदार, साहूकार, मिल-मालिक, राजा और महाराजा—उनकी पोल खोली गई है और गरीब किसानो की नग्न दशा का चित्रण किया गया है। देहाती किसान साहूकार और मिल-मालिक के दुहरे पाट के बीच मे पड़कर किस प्रकार पीसा जाता है इसका मर्मस्पर्शी वर्णन लेखक ने किया है :

"हाइ हो देहिया लगली जोक।
रात दिन हम कमवा में खटली, कपरा लेहली ठोंक।

डेढ़ा सवाई सहुआ कइले, दे लै करेजवा भोंक।
खोलि दुकनिया सेठवा लूटैं, देवो के नाहीं रोक।
मिल में बइठि मजूरवा रोवै, भकसी देहले झोंक।"

जमींदार और मिल-मालिक किसान तथा मजदूरों को जोक की तरह चूसते हैं। इसी बात को दिखालाने के लिए इस पुस्तक का नाम 'जोक' रखा गया है।

जापानियो ने चीन देश पर आक्रमण करके जो जघन्य अत्याचार किया था उसी का वर्णन 'जपनिया राछछ' नाटक मे हुआ है। 'जरमनवा के हार निहचय' में हिटलर के अत्याचारो का उल्लेख है। गत महायुद्ध मे जर्मनी ने रूस देश पर चढ़ाई करके वहाँ की जनता को जो कष्ट दिया था उसका सक्षिप्त विवरण यहाँ दिया गया है। 'देश-रक्षक' मे देश की रक्षा करने वाले सिपाहियो का वर्णन है। बर्मा में हिन्दुस्तानी सिपाहियो ने जो बहादुरी का काम किया था उन कार्यों का वर्णन लेखक ने बड़े गर्व के साथ किया है। गरीब सिपाही अपनी जान देकर देश की रक्षा किस प्रकार करता है यही इस नाटक का प्रधान विषय है।

'ढुनमुन नेता' मे ऐसे तथाकथित नेताओं का चरित्र-चित्रण किया गया है जिनका कोई सिद्धान्त नहीं होता। जो कभी किसी पार्टी के स्तम्भ के रूप मे दिखाई पड़ते हैं, परन्तु अपने स्वार्थ की सिद्धि न पाते देख झट उस पार्टी को छोड़कर दूसरी पार्टी में जा मिलते हैं। ये नेता कभी जमींदारो की सहायता करने के लिए तैयार रहते हैं और कभी किसानों के हितो के हिमायती बनते है। सम्भवतः इसीलिए ऐसे नेताओ को 'ढुनमुन' कहा गया है। इनके चरित्र को बतलाता हुआ लेखक लिखता है कि ये लोग कभी चरखा और खद्दर का गीत गाते हैं और कभी किसान-मजदूर-राज्य स्थापित करने का राग अलापते हैं :

"एन कर ढुनमुन ह नांव,
ई नेता हवे बड़ भारी।

कबहुँ चरखवा खदरवा के गीत गावै,
मिलबो कबहुँ महँतारी।
कबहुँ मजुरवा-किसनवा के रजवा,
सेठन के कबहुँ पुछारी।।"

विगत महायुद्ध को साम्यवादी विचार-धारा वाले लोग 'जनता की लडाई' (पीपुल्स वार) कहा करते थे। इस नाटक मे विद्वान् लेखक ने इसी बात को सन्निहित रूप मे प्रतिपादित किया है।

राहुलजी के इन नाटक-चक्रो की भाषा बडी सरल, सीधी-सादी तथा मुहावरेदार है। राहुलजी ठेठ भोजपुरी लिखने मे सिद्धहस्त हैं। उन्होने अंग्रेजी भाषा के जिन शब्दो का प्रयोग अपने नाटको मे किया है उन्हे पूर्णतया भोजपुरी का चोला प्रदान किया है, जैसे—बैरिस्टर का बलिहटर और मजिस्ट्रेट का मजिहटर। आपका भोजपुरी गद्य नितान्त प्राञ्जल, प्रवाहपूर्ण और सुष्ठु है।

पं० *गोरखनाथ चौबे*—चौबेजी ने 'उल्टा जमाना' नामक नाटक लिखा है। इसके नाम से ही इसके वर्ण्य विषय का कुछ अनुमान किया जा सकता है। आधुनिक पढ़ी-लिखी स्त्रियाँ घर और गृहस्थी का काम किस प्रकार ताक पर रखकर सभा-सोसाइटियो मे जाकर अपना समय व्यर्थ गँवाती है और घर की शान्ति को नष्ट कर देती है इसका सुन्दर वर्णन इस नाटक मे किया गया है। आजकल समाज मे जो उच्छृङ्खलता दिखाई पड़ती है—पुत्र पिता का कहना नहीं मानता, पतोहू सास की आज्ञा का उल्लंघन करती है और पढी-लिखी पत्नी पति का निरादर करती है—उसका मार्मिक चित्रण इसमे उपलब्ध होता है। आजकल की नई शिक्षा की आलोचना करती हुई कोई स्त्री कहती है कि :

"का आजु ये कालिह क पढ़ाई-पढाई कहला जाला जे मेहरारू मरदे से बाजें, पतोहि सासु से लड़ें अा घर-दुआर छोड़ि के दुनिया में सभा करे। इ पढ़ाई क दिन चली बुधिया।" यह आलोचना कितनी सटीक है।

इस पुस्तक की भाषा बडी सरल और मुहाविरेदार है। विद्वान् लेखक ने मुहावरो और कहावतो का स्थान-स्थान पर प्रयोग किया है। जैसे : **एकर नतीजा इहे मिलल कि धोबी क कुक्कुर न घर क न घाट क; उर्दी के भाव पूछे छ पसेरी बनउर; सज्जी कुक्कुर गगे नहइहे त हॉडो के ढूढ़ी।"** इस प्रकार चौबेजी की भाषा-शैली मॅजी हुई और चुस्त है।

राम विचार पाण्डेय— आधुनिक भोजपुरी कवियो के प्रसंग मे इनका विशेष उल्लेख किया जा चुका है। ये कवि होने के अतिरिक्त एक सफल नाटककार भी है। इन्होने 'कुॅवरसिह' नामक नाटक लिखा है, जिसमे सन् '५७ के सुप्रसिद्ध वीराग्रणी बाबू कुॅवरसिह का जीवन चित्रित किया गया है। यह नाटक विभिन्न अवसरो पर बडी सफलता के साथ खेला भी गया है। इस नाटक मे ओज गुण की प्रधानता है। इसके पढ़ने से हृदय मे वीर रस का सचार होने लगता है। जब बाबू कुॅवरसिह अपने सिपाहियों से पूछते है कि कहो, मातृभूमि की रक्षा के लिए लडने के लिए कौन-कौन लोग तैयार है। तब सब सिपाही एक स्वर से बोल उठते हैं कि "सब केहू तैयार बा" अर्थात् हम सब लोग तैयार है। यह दृश्य बडा ही सुन्दर तथा मर्मस्पर्शी है।

वीरेन्द्र किशोर सिनहा—इन्होने एकाङ्की नाटक लिखने मे अच्छी सफलता प्राप्त की है। इनका 'रत्नावली' नामक एकाङ्की भोजपुरी पत्रिका मे प्रकाशित हुआ है, जिसमे अपनी स्त्री रत्नावली द्वारा तुलसीदास को ज्ञान-प्राप्ति वाली कथा का वर्णन है। इनकी भाषा सरल तथा मुहावरे-दार है। कहीं-कही इन्होने भोजपुरी के ठेठ शब्दो का प्रयोग बडी सुन्दरता से किया है। यहॉ केवल एक उदाहरण पर्याप्त होगा :

"कइसन कुपाकुप अन्हरिया बा। एही घर में ऊ होइहें। पुकारीं ? बाकिर अइसन हहास बान्हके बरिसता कि बोलिओ ओहिजा लेना पहुँची। × × × ससुरारी के रसरियो चीकन होला ! कतनो चीकन होय, हमरा परेम से जादे चीकन होइ तव नू हम एकरा से हारब।"

उपन्यास

भोजपुरी मे किसी स्वतन्त्र मौलिक उपन्यास की रचना अभी तक नहीं हुई है। परन्तु 'भोजपुरी' पत्रिका के यशस्वी सम्पादक श्री रघुवश-नारायण सिह ने सुप्रसिद्ध रूसी उपन्यास-लेखक वाएडावासिलवेंस्का के उपन्यास का 'बोरो' नाम से भोजपुरी मे रूपान्तर उपस्थित करके इस अभाव की पूर्ति की है। श्री रघुवश नारायण जी एक ऐसे लेखक हैं जिन्हे भाषा पर पूर्ण अधिकार प्राप्त है। इसीलिए इनका अनुवाद बहुत सरस और सुन्दर बन पड़ा है। यह अनुवाद धारावाहिक रूप से 'भोजपुरी' मे प्रकाशित हो रहा है। हमे रघुवंश नारायण जी से बड़ी आशाएँ है। अतः यह विश्वास किया जाता है कि वे अपनी प्रतिभा का अवदान मौलिक उपन्यास के रूप मे भोजपुरी को शीघ्र ही प्रदान करेंगे।

: ६ :

लोक-काव्य-संग्रह

आजकल भोजपुरी मे ऐसी बहुत-सी छोटी-छोटी फुटकर कविताओं की पुस्तिकाएँ प्रकाशित हुई है, जिन्हे गवैये गा-गाकर मेलो अथवा बाजारो मे बेचते फिरते हैं। काव्य की दृष्टि से इन पुस्तिकाओं का विशेष मूल्य नहीं है, फिर भी भोजपुरी कविता के नमूने के रूप मे इनका कुछ कम महत्त्व नही। इन पुस्तिकाओं मे वर्तमान भोजपुरी-समाज का चित्रण बड़ी सुन्दर रीति से किया गया है। इनमे कहीं तो मेलो मे घूमने वाली स्त्रियों का उल्लेख किया गया है, तो कहीं गगा-स्नान करने को जाने वाली महिलाओं का चित्रण पाया जाता है। ये गीत 'मेलाघुमनी' और 'गंगा-नहवनी' के नाम से प्रसिद्ध है। 'झरेलवा', 'ब्रिदेसिया' और 'बनवारी' के गीत तो भोजपुरी-प्रदेश के प्रत्येक गॉव मे गाये जाते है। 'झरेलवा' मे आजकल के नवयुवकों की फ़ैशन-परस्ती की खिल्ली बडे सुन्दर ढग से उड़ाई गई है। इसी प्रकार से 'प्यारी सुन्दरी वियोग' मे किसी विरहिणी की मनोव्यथा का चित्रण किया गया है।

इन पुस्तिकाओं के लेखकों का नाम अज्ञात है। बहुत सम्भव है कि ये लेखक जीवित हो, शायद किन्हीं अपरिहार्य कारणो से इन्होंने इन

पुस्तकों मे अपना नाम देना उचित न समझा हो। समाज का वास्तविक चित्रण होने के कारण इन गीतो द्वारा साधारण जनता का अनुरञ्जन प्रचुर मात्रा मे होता है। गॉवों मे जहॉ न तो रेडियो है और न सिनेमा-घर ही, वहॉ इन्ही गीतो द्वारा जनता आनन्द प्राप्त करती हैं और अपने दुःखो को क्षण-भर के लिए भूल जाती है। यही इन पुस्तकों का महत्त्व है।

ये छोटी-छोटी कविता की पुस्तिकाएँ प्रधानतया दो स्थानो से प्रकाशित हुई है—(१) काशी और (२) कलकत्ता से।[1] काशी से जो पुस्तके प्रकाशित हुई है, उनका सक्षिप्त विवरण इस प्रकार है :

झरेलवा झरेलिया बहार—आजकल के फैशनेबुल नवयुवकों को इस पुस्तक मे 'झरेलवा' की सज्ञा दी गई है और सोसाइटी मे तितली बनकर घूमने वाली लडकियो को 'झरेलिया' कहा गया है। इन दोनो के फैशन का वर्णन इस पुस्तिका मे बडी सुन्दर रीति से किया गया है।

मैना की जातसारी—इस पुस्तिका मे मैना नामक किसी स्त्री के आदर्श प्रेम का वर्णन किया गया है। मैना की प्रेम-कथा बडी सरस तथा रोचक है। इसमे शृङ्गार तथा करुण रस का बडा रमणीय परिपाक बन पडा है। मैना किसी तालाब के किनारे अपने गले का हार निकाल-कर स्नान करने जाती है। इतने मे कोई चील आकर उस हार को लेकर किसी विशाल वृक्ष के ऊपर की शाखा पर रख देती है। मैना का प्रेमी गोबिना उस हार को लेने के लिए उस वृक्ष पर चढ जाता है। परन्तु मैना उसको ऐसा करने के लिए मना करती हुई कहती है कि

"गछिया उपर गोबिना चढ ले पलइया हो,
गोबिना सनेहिया मैना बोले ले हो राम।
सुनु-सुनु गोबिना रे प्रान के पियरवा हो,
दिलवा के हरवा तुहु यरवा हो राम॥

---

१. गुल्लूप्रसाद केदारनाथ बुकसेलर, कचौड़ी गली, बनारस सिटी। पं० रामनारायण त्रिवेदी, मैनेजर, दूधनाथ प्रेस, सलकिया (हवड़ा) कलकत्ता।

आग लागों हरवा रामा फिर आव घरवा हो ,
हमरी बचनियाँ मनवाँ धारहु हो राम ।
गिरबे सागर बिचवा, जइबे पतलवा हो ,
तोहरी सुरतिया सपना होइहें हो राम ॥"

उपर्युक्त पंक्तियो मे गोबिना के प्रति मैना का प्रेम उमडा पडता है।

पूर्वी की परी—इस पुस्तिका के लेखक का नाम पन्नालाल है। इसमे जो कविताएँ है, उनमे श्रीकृष्ण की बाल-लीला, भजन, प्रियतम का परदेस जाना और उसकी विरहिणी स्त्री का वियोग-वर्णन है।

चम्पा-चमेली की बातचीत के लेखक श्री कपूर हैं, जैसा कि नीचे की पंक्ति से पता चलता है :

"कजरी लिखलन कपूर, भइल पञ्च से मंजूर ।"

इस पुस्तिका मे चम्पा और चमेली की प्रेम-कथा का वर्णन है। इसमे चम्पालाल की लम्पटता और चमेली की साधुता का सुन्दर चित्र खींचा गया है।

गारी मनोरंजन—इसके लेखक श्री नित्यानन्द है। भोजपुरी प्रदेश मे विवाह के अवसर पर जब वर का पिता (समधी) कन्या के घर पर, विवाह मण्डप मे भात खाने के लिए जाता है, उस समय गाली गाने की प्रथा है। यदि इस शुभ अवसर पर समधी को गाली गाकर न सुनाई जाय, तो वह अपना अपमान समझता है। इस पुस्तिका मे इसी अवसर पर गाए जाने वाली गालियो का सग्रह है। चूँकि इस अवसर पर दी जाने वाली गालियाँ बडी मनोरंजक होती है, इसीलिए इस पुस्तक का नाम 'गाली मनोरजन' रखा गया है। ये गालियाँ ग्रामीण होते हुए भी ग्राम्य नहीं है। इनमे अश्लीलता कही भी नही पाई जाती। एक उदा-हरण लीजिए :

"हरियर बइरिया के उलटल पात हो।
बताव मोहन राम आपन जात हो।

माई मोरी धोबिन बाबा चुरिहार हो।
बहिनी जेंवाय कइलो जाति भठियार हो ।।"

बारहमासा—इसमे बारह महीनो का बड़ा सरस वर्णन किया गया है। इस पुस्तिका मे बारह सखियो का उल्लेख है, जो एक-एक करके प्रत्येक मास मे होने वाले अपने कष्टो का वर्णन करती हैं। इसके प्रत्येक गीत मे समाज का बड़ा सजीव चित्रण किया गया है। वृद्ध-विवाह, बाल-विवाह, कन्या का विक्रय आदि अनेक सामाजिक कुरीतियो का वर्णन बड़े ही करुण शब्दो मे हुआ है। इस पुस्तिका के लेखक ने भिन्न-भिन्न सखियो से अपने दुःख-कथन के व्याज से समाज मे प्रचलित कुरीतियो की ओर जनता का ध्यान आकर्षित किया है।

प्यारी सुन्दरी वियोग—इस पुस्तिका मे किसी स्त्री के वियोग की करुण कथा बड़े ही मार्मिक शब्दो मे कही गई है। भोजपुरी प्रदेश के निवासी अपनी जीविका की खोज में प्रायः कलकत्ता और रंगून जाते हैं। वे अनेक वर्षो के पश्चात् घर लौटते हैं। इस बीच में उनकी स्त्रियाँ विरहानल मे जलती रहती हैं। इसी विषय का वर्णन इसमे किया गया है। करुण तथा शृङ्गार रस का मधुर परिपाक यहाँ देखने को मिलता है।

सोहर शृङ्गार—इस पुस्तिका के लेखक डॉ० मोतीचन्द श्रीवास्तव हैं, जो जिला आरा (बिहार) के निवासी हैं। इसमे सोहर छन्द में गीत लिखे गए है, जिनमे राम और कृष्ण के जन्म का वर्णन है।

सीता हरण—इस पुस्तिका के लेखक का नाम गोरखनाथ शर्मा है, जो बिहार राज्य के आरा जिले के निवासी हैं। इसमे सीता-हरण की कथा सोरठी राग में गाई गई है। पुस्तक के प्रारम्भ में दो पृष्ठों का लम्बा सुमिरन है, जिसमे सभी देवताओ की स्तुति की गई है। विराध-वध के अनन्तर राम शरभंग मुनि का दर्शन करते हैं और यहीं पर पुस्तक समाप्त हो जाती है।

ननदी भौजेया—इसके लेखक प्यारेराम हैं, जो बिहार राज्य के या जिले के निवासी हैं। इसमें ननद और भौजाई (भावज) का

वार्तालाप है। इस पुस्तिका के कवि ने सवाद-प्रणाली का अनुसरण करके बाल-विवाह की बुराइयो को दिखलाने का प्रयत्न किया है। किसी प्रौढा स्त्री का विवाह ऐसे व्यक्ति से होता है, जो अभी बालक है। वह अपने पति के 'अलप वयसवा' (अल्प वयस्क) होने के कारण अपनी मनोकामना को पूरी नहीं कर पाती। इस कारण वह अपने माता और पिता को कोसती है। उसकी आन्तरिक मनोवेदना का यह वर्णन कितना मर्मस्पर्शी है :

"चढ़लो जवानी मोरे अग अंग फरकेसे ,
पिया बिनु हिया नित फाटे रे भउजिया।
घेरेले बदरिया दामिनि घहराई उठे ,
रगे रगे मदन सतावे रे भउजिया।
विरहा के आगि मोरा लागेला सरिरवा में ,
फर फर फरके जोबन रे भउजिया॥"

युवती स्त्री का दुःख ऊपर की पंक्तियो मे उमडा पडता है। इसकी प्रत्येक पंक्ति मे करुण रस भरा पडा है।

बड़ी गोआल गारी—यह पुस्तिका विवाह के अवसर पर गाए जाने वाली गालियों का सग्रह है। इन गालियो को 'प्रेम पियारी' कहा गया है, क्योकि यह सुनने वालो को अच्छी लगती है।

भिखारी नाटक उर्फ गगा-स्नान—इसमे गंगा-स्नान के लिए जाने वाली स्त्रियो का वर्णन किया गया है। जब भोजपुरी स्त्रियाँ झुण्ड बना-कर गगा-स्नान करने के लिए गीत गाती हुई चलती है तो वह दृश्य सचमुच ही बडा सुहावना मालूम होता है। यह वर्णन सुनिये :

"चल गोरिया करे गंगा आसनानवा।
सारी, चोली पेन्हकर सब अभरनवाँ।
तेहि पर सोभी सोना, चाँदी के गहनवाँ।
खाये खातरि बाँध नून, सतुआ पिसनवाँ।
बने त बनात झट-पट पकवनवाँ।"

बापू का हत्या-काण्ड—इसके लेखक का नाम प० रामएकबाल मिश्र है। जैसा कि इसके नाम से विदित होता है, इसमे महात्मा गाधी की हत्या का वर्णन किया गया है। इसकी भाषा करुण रस से पूर्ण है।

सोरठी का गीत—लेखक एस० पी० सिह। कवि ने इसे पॅवारा का नाम दिया है। सोरठी की कहानी बड़ी ही रोचक तथा मनोरजक है। श्रोतागण इसे बडे चाव से सुनते और आनन्द लेते हैं। इसी कथा को लेकर एक दूसरी पुस्तक भी लिखी गई है; जिसका नाम *सोरठी बृजाभार* है। यह ग्रन्थ महाकाव्य के रूप मे लिखा गया है, जिसमे ६४ भाग हैं और पृष्ठों की सख्या ३३२ है। इसके लेखक का नाम बाबूलाल है, जो बिहार राज्य के गया जिले के निवासी है। कवि ने कथानक को स्पष्ट करने के लिए बीच-बीच मे गद्य का भी प्रयोग किया गया है।

विहुला गीत—इसमे विहुला की कथा बडी रोचक भाषा मे लिखी गई है। विहुला की कहानी इतनी सरस और भाषा इतनी मर्मस्पर्शी है कि इसे सुनकर श्रोताओ का हृदय द्रवित हो जाता है। इस कथा का भोजपुरी प्रदेश मे इतना प्रचार है कि अनेक कवियों ने इसके कथानक को लेकर काव्य-रचना की है। वगला भाषा मे भी इस कहानी के आधार पर अनेक काव्य-ग्रन्थों का निर्माण किया गया है।

शोभा नयका बनजारा—इस पुस्तक के लेखक श्री बाबूलाल है; जिनका उल्लेख अभी हो चुका है। यह पुस्तक २४ भागो मे लिखी गई है। यह ग्रन्थ भोजपुरी महाकाव्य है, जिसमे शोभा-नयका नामक किसी बनजारे या सौदागर की कथा विस्तार से कही गई है।

गांधीजी का स्वर्गवास—लेखक गोस्वामी चन्द्रशेखर भारती है, जो बिहार राज्य के छपरा जिले के निवासी है। इसमे महात्मा गाधी की हत्या का वर्णन है। इसके साथ ही भारत के द्वारा स्वतन्त्रता-प्राप्ति और भारत-विभाजन का भी उल्लेख है।

नैहर खेलनी—इसके लेखक मुन्शी मुहम्मद हुसैन है। ये उत्तर प्रदेश के बलिया जिले के निवासी हैं। इस पुस्तिका मे नैहर (मायके)

मे रहकर स्वच्छन्द रीति से विहार करने वाली स्त्रियो का वर्णन किया गया है। यद्यपि इस पुस्तिका का लेखक मुसलमान है परन्तु इसमे उर्दू या फारसी का एक भी शब्द प्रयुक्त नही हुआ है। इसकी भाषा ठेठ भोजपुरी है।

बनवारी-गीत—इस पुस्तिका के रचयिता महादेव प्रसाद सिह 'घन-श्याम' हैं। भोजपुरी प्रदेश मे बनवारी गीत बडा ही लोकप्रिय तथा प्रसिद्ध है। जहाँ भी कहीं देहात मे चले जाइये **'बनवारी हो हमरा के लरिका भतार'** का मधुर स्वर आपको सुनने को मिलेगा। किसी युवती स्त्री का विवाह ऐसे पति से हुआ है जो अभी बिलकुल बालक है। अतः वह स्त्री बनवारी अर्थात् श्री कृष्ण (भगवान्) से अपनी मनोव्यथा का वर्णन करती है। इसलिए इस गीत का नाम बनवारी-गीत पड़ गया है। इसमे तरुणी स्त्री की मनोवेदना का बडा ही मर्मस्पर्शी वर्णन हुआ है। कुछ पक्तियाँ सुनिये :

"सबका के देल भोला अन धन सोनवा,
बनवारी हो! हमरा के लरिका भतार।
लरिका भतार लेके सुतली ओसरवा,
बनवारी हो, जरि गइले एड़िया से कपार।
थपरा से मार धइ बाँह झहराई,
बनवारी हो माई माई करेले गोहार।
चुप होख चुप होख हमरे बलमुआँ,
बनवारी हो रहरी में बोलेला हुँडार
सोरह बरीस कर हमरी उमरिया,
बनवारी हो आठ कर सैयाँ हमार।"

उपर्युक्त गीत मे भोजपुरी-समाज मे प्रचलित बाल-विवाह का चित्रण बडा सुन्दर तथा सजीव हुआ है।

सास पतोहू का झगड़ा—लेखक डॉ० मोतीचन्द्र सिह। इसमे सास और पतोहू के बीच नित्य-प्रति होने वाले झगडे का वर्णन किया गया

है। इसके साथ ही ननद-भौजाई, और पति-पत्नी के पारस्परिक कलह का वर्णन भी कुछ कम मनोरञ्जक नहीं है।

भोजपुरी पद्य मे लिखित उपर्युक्त पुस्तिकाओ के अतिरिक्त कुछ ऐसे ग्रन्थो की रचना भी हुई है जिन्हे साधारणतया प्रबन्ध-काव्य कहा जा सकता है। इन ग्रन्थो का प्रकाशन दूधनाथ प्रेस, सलकिया (हवडा) कलकत्ता से हुआ है। इन ग्रन्थो मे किसी लम्बे कथानक को काव्य का विषय बनाया गया है। इनमे से कुछ प्रसिद्ध ग्रन्थों का सक्षिप्त परिचय यहाँ दिया जाता है—

लोरिकायन—भोजपुरी प्रदेश मे वीराग्रणी लोरकी या लोरिकायन की कथा बड़ी प्रसिद्ध है। लोरकी एक वीर पुरुष था जिसने अनेक पराक्रम के कार्य किये। इसीकी जीवन-गाथा इस पुस्तक मे गाई गई हैं। लोरकी की गाथा बहुत प्राचीन है, जिसे गवैये बड़े चाव तथा उमंग से गाया करते हैं। परन्तु इसका प्राचीन पाठ (Old version) अभी तक प्रकाशित नही हुआ है। 'लोरिकायन' महादेव प्रसाद सिह की लिखी नवीन रचना है, जो अभी हाल ही मे प्रकाशित हुई है। यह वीर-रस-प्रधान काव्य है, जो दो खण्डो मे लिखा गया है।

विहुला विषहरी—इसमे विहुला की कथा विस्तार के साथ वर्णित है। विहुला की कथा अत्यन्त प्रसिद्ध है। जिसे लेकर अनेक ग्रन्थो की रचना की गई है। इसी कथानक को लेकर लिखे गए 'विहुला-गीत' का उल्लेख अभी पिछले पृष्ठो मे किया जा चुका है। इस ग्रन्थ मे ६ खण्ड हैं, जिसमे विहुला तथा बाला लखन्दर की प्रेम-कथा गाई गई है। यह कथा करुण रस से ओत-प्रोत है।

बाला लखन्दर अथवा विहुला विषधरी—इस ग्रन्थ का भी वर्ण्य विषय वही है जो 'विहुला विषहरी' का है। इसके लेखक महादेव प्रसाद सिह हैं।

नयकवा बनजारा—इस पुस्तक का भी वर्ण्य विषय वही है जो 'शोभानयका बनजारा' नायक काव्य-पुस्तिका का है। इसका उल्लेख

पहले किया जा चुका है ।

कुँवर विजयी—कुँवर विजयी की कथा लोरकी की भाँति ही भोजपुरी-प्रदेश मे प्रसिद्ध है। कुँवर विजयी विजयमल के नाम से भी विख्यात है। यह एक शूर तथा वीर पुरुष था, जिसने अनेक पराक्रम के कार्य किए है। यह पुस्तक सोलह भागो मे लिखी गई है। इसे भोजपुरी का महाकाव्य कहे तो अतिशयोक्ति न होगी ।

राजा ढोलन के गीत—राजा नल के पुत्र का नाम ढोलन था। यह पुस्तक बारह भागो में लिखी गई है, जिसमे इन्हीं ढोलन के जीवन-चरित्र का वर्णन सुन्दर पद्यो मे किया गया है। इसमे खड़ी बोली गद्य का भी प्रयोग हुआ है। 'कुँवर विजयी' तथा इस पुस्तक के रचयिता श्री महादेव प्रसाद सिंह हैं ।

: ७ :

लोक-नृत्य—नाट्य

भोजपुरी मे लिखे गए नाटको की चर्चा पिछले पृष्ठों में की जा चुकी है। यहाँ पाठकों मे सामने भोजपुरी नृत्य-नाट्य (Dance-drama) का वर्णन उपस्थित किया जाता है। यह नृत्य-नाट्य 'विदेसिया' के नाम से प्रसिद्ध है। भोजपुरी प्रदेश में इस नृत्य-नाट्य का अत्यन्त अधिक प्रचार है। इसे देखने के लिए हजारों आदमियों की भीड़ इकट्ठी हुआ करती है।

विदेसिया नाटक

यदि किसी भोजपुरी गाँव में रात के समय आप हजारों मनुष्यों की भीड़ एकत्रित देखें, जिसके बीच में लाल पगड़ी वाले भी दिखाई पड़ते हों तथा जहाँ से गाने-बजाने की मधुर ध्वनि सुनाई पड़ रही हो, तो यह निश्चय ही समझ लीजिए कि वहाँ 'विदेसिया' नाटक हो रहा है। देहातो मे इस नाटक के द्वारा जन-मन का जितना अधिक अनुरञ्जन होता है उतना अन्य किसी साधन के द्वारा नहीं। इसे देखने के लिए जनता की भीड़ टूटी पड़ती है; जिसका समुचित प्रबन्ध करने के लिए पुलिस की

तैनाती करनी पड़ती है ।

जीवन-वृत्त

इस 'विदेसिया नाटक' के लेखक भिखारी ठाकुर है। ये बिहार राज्य के छपरा जिले के कुतुबपुर गॉव के निवासी हैं। जाति के नाई होने के कारण ये अपने नाम के आगे 'ठाकुर' उपाधि लिखा करते हैं। भिखारी ठाकुर ने अपना परिचय स्वय देते हुए इस प्रकार लिखा है :

> **"जाति क हजाम मोर कुतुबपुर ह मोकाम,**
> **छपरा से तीन मील दियरा में बाबू जी।**
> **पुरुब के कोना पर गंगा के किनारे पर,**
> **जाति पेसा बाटे विद्या नाहीं बाटे बाबूजी॥"**

भिखारी ठाकुर ने किसी विद्यालय मे शिक्षा नहीं प्राप्त की। परन्तु इन्हे ऐसी दैवी प्रतिभा अवश्य प्राप्त है जिसके द्वारा इन्होंने अशिक्षित होते हुए भी भोजपुरी में इतनी साहित्य-सृष्टि की है। भिखारी ठाकुर—जो भोजपुरी प्रदेश मे 'भिखरिया' के नाम से सुप्रसिद्ध हैं—की प्रवृत्ति लड़कपन से ही गाने-बजाने की ओर अधिक थी। इन्हें रामलीला देखने का बड़ा शौक था और वे उसमें भाग भी लिया करते थे। कुछ बड़े होने पर इन्होंने अपने कुछ साथियों को इकट्ठा करके राम-कथा का अभिनय करना प्रारम्भ कर दिया। इसमें सफलता मिलने पर इन्होंने 'विदेसिया' नाटक की रचना की और उसे भिन्न-भिन्न स्थानों मे अभिनीत करके प्रदर्शित किया। भिखारी ठाकुर कुशल नाटककार भी हैं और एक सफल अभिनेता भी। भगवान् ने इन्हे गला भी अच्छा दिया है। अतः नाटकीय कला, अभिनय और सगीत-स्वर-साधना की इस त्रिवेणी के द्वारा इनका नाम अत्यन्त प्रसिद्ध हो गया। कुछ ही दिनो मे 'विदेसिया' नाटक घरेलू बन गया और उसे देखने के लिए जनता की अपार भीड़ इकट्ठी होने लगी। जिस बारात में विदेसिया नाटक दिखलाया जाता था वहाँ जन-समुद्र लहराने लगता था। भोजपुरी प्रदेश में आज

'विदेसिया' नाटक का जितना प्रचार है उतना अन्य किसी नाटक का नहीं।

विदेसिया नाटक की कथा-वस्तु

भोजपुरी प्रदेश के लोग जीविकोपार्जन के लिए प्रायः कलकत्ता और रगून जाया करते है। ऐसा ही कोई व्यक्ति कलकत्ता जाकर पुलिस मे भर्ती हो गया है। छुट्टी न मिलने के कारण वह अनेक वर्षों तक घर नहीं लौटता। कलकत्ता मे वह किसी बगालिन युवती से प्रेम करने लगता है और उसके प्रेम-जाल मे फँसकर घर पर रहने वाली अपनी ब्याहता स्त्री की खोज-खबर तक नहीं लेता। न तो वह उसके पास कोई पत्र भेजता है, और न खाने-पीने के लिए रुपया ही। वह सती स्त्री अनेक वर्षों तक पति का समाचार न मिलने से उसके विरह मे बेचैन हो जाती है। एक दिन रास्ते में जाता हुआ कोई बटोही उसे मिलता है। वह उसे अपनी दुःख-गाथा सुनाती है और उससे प्रार्थना करती है कि ए बटोही भइया! तुम हमारा सदेश मेरे पति के पास ले जाओ! इस पर वह बटोही उत्तर देता है कि मैं तुम्हारे पति को नही पहचानता। अतएव मैं तुम्हारा सन्देश कैसे पहुँचा सकता हूँ? इस पर वह स्त्री अपने पति का हुलिया बतलाती हुई कहती है कि मेरे पति की आँखे बडी-बड़ी है, उनकी नाक तोते की नाक की तरह 'चोख' है, उनके होठ पान के पत्ते की तरह पतले हैं, दाँत बिजली के समान सफेद और चमकने वाले है। उनकी मूँछे काली-काली हैं; ऐसा मालूम होता है कि उन पर भौंरे मँडरा रहे हों। उनके सिर पर लाल पगड़ी और ललाट पर लाल तिलक शोभायमान हैं। पति का यह हुलिया कितनी सजीव तथा रमणीय है:

"हमरा बलमुजी के बडी-बडी अँखिया से,
चोखे चोखे बाडे नैना कीर रे बटोहिया।
ओठवा त बाड़े जैसे कतरल पनवाँ से,
नकिया सुगनवाँ के ठोर रे बटोहिया।

दँतवा तो सोभे जैसे चमके बिजुलिया से,
मोछियन भँवरा गुँजारे रे बटोहिया।
मथवा में सोभे रामा लाली लाली पगड़ी से,
रोरी बुना सोभेला लिलार रे बटोहिया॥"

वह परोपकारी बटोही पूरब देश को जाता है और बड़ी कठिनाई से उस स्त्री के पति का पता लगाता है। बटोही उस परदेशी पति से उसकी प्रियतमा की दुःख-गाथा सुनाता है और कहता है कि तुम्हारी स्त्री (तुम्हारे) वियोग मे सूखकर काँटा हो गई है। यह सुनते ही वह परदेसी मूर्छित हो जाता है। होश मे आने पर वह उदासीन रहने लगता है और घर लौट जाने की चिन्ता करता है। उसे उदासीन देखकर उसकी रक्षिता स्त्री इसका कारण पूछती है और यह जानने पर कि वह घर लौटने के लिए व्याकुल है उसे घर न जाने के लिए प्रार्थना करती है। रक्षिता अपना प्रेम-जाल फैलाती है, उसे तरह-तरह का प्रलोभन देती है। परन्तु वह परदेसी सिपाही अपनी ब्याहता स्त्री के प्रेम से आकर्षित होकर उस रक्षिता की बात न मानकर, अपनी नौकरी छोड़कर घर लौट आता है। वह रात मे अपने घर पहुँचता है और अँधेरे मे अपने घर का दरवाज़ा खटाखटाता है। उसकी स्त्री उसे चोर समझकर डर जाती है और रोती हुई कहती है कि आज मेरे सिपाही पति घर पर होते तो इस चोर को मार भगाते। स्त्री के यह पूछने पर कि तुम कौन हो वह उत्तर देता है कि मैं तुम्हारा ब्याहता पति हूँ। तब वह स्त्री डरते-डरते दरवाज़ा खोलती है और अनेक वर्षों के बाद आये हुए अपने परदेशी पति को सामने खड़ा देखकर अत्यन्त प्रसन्नता के कारण मूर्छित हो जाती है। पति उसे उठाकर अपने हृदय से लगा लेता है।

सक्षेप मे 'विदेसिया' नाटक की यही कथा है।

'विदेसिया' का अभिनय तथा नृत्य

'विदेसिया' नाटक का अभिनय प्रायः भोजपुरी बारातो तथा अन्य

विशेष अवसरो पर हुआ करता है। इसे देखने के लिए दर्शको की इतनी अधिक भीड हुआ करती है कि इसे किसी घिरे हुए स्थान—जैसे हाल, शामियाना आदि—मे करना असम्भव है। इसलिए इसका अभिनय खुले हुए रग-मच (ओपेन थियेटर) पर हुआ करता है। नाटक करने वाले खुले मैदान मे दो-चार चौकियो (काठ के तख्तो) को रखकर रगमच तैयार कर लेते हैं। चौकियो के पास कोई कपड़ा तानकर 'आड़' कर लेते है। रगमच पर किसी परदे या यवनिका का प्रबन्ध नही रहता। यहाँ नेपथ्य का भी अभाव रहता है। विभिन्न पात्र किसी पेड की आड मे खड़े होकर अपनी वेश-भूषा बदलकर तैयार होते हैं और रगमच पर आकर अपना अभिनय करते है। अभिनय समाप्त होने के पश्चात् वे चले जाते है और फिर दूसरा पात्र इसी प्रकार आकर अपना अभिनय दिखलाता है। 'विदेसिया' नाटक मे स्त्री पात्र का काम भी पुरुष ही किया करते हैं। भोजपुरी-प्रदेश मे पर्दे की प्रथा बहुत है। अतएव देहातो मे रंगमच पर किसी स्त्री का आकर अभिनय दिखलाना सम्भव नहीं है। इस नाटक मे विभिन्न पात्रो का कार्य भिन्न-भिन्न व्यक्ति करते हैं परन्तु अभिनेताओ की कमी के कारण कभी-कभी एक ही व्यक्ति अनेक पात्रों का अभिनय करता है। नौजवान छोकरे, जिन्हे भोजपुरी मे लौंड़ा कहते हैं, स्त्री-पात्र का अभिनय करने के लिए विशेष उपयुक्त समझे जाते हैं। वे अपनी वेश-भूषा तथा प्रसाधन द्वारा स्त्री-पात्र का इतना सजीव अभिनय करते है कि यह जानना कठिन हो जाता है कि अभिनय करने वाला पात्र स्त्री है अथवा पुरुष।

अभिनय करने वाले पात्र प्रसंगानुसार एक या दो-तीन की सख्या मे रगमच पर आते हैं और विदेसिया के कथानक को लेकर अभिनय करते हैं। अभिनय करते समय वे बीच-बीच मे नाचते भी जाते है। नाचने के समय ढोल, सरंगी (सारंगी) तथा हारमोनियम भी बजती रहती है। इन नर्तको को शास्त्रीय नृत्य की विधिवत् ट्रेनिग नहीं दी जाती। अतएव वे संगीत के ताल पर नृत्य न करके स्वतन्त्र रूप से नाचते हैं। इस

नृत्य मे उछल-कूद बहुत होती है। नृत्य करने वाला कभी यहाँ दिखाई देता है और कभी वहाँ। कमर मे घाँघरा और पैरो मे नूपुर पहनकर वह काफी तेजी से नृत्य करता है। इस नृत्य मे पैरो का सचालन बडी तीव्र गति से किया जाता है। जो नर्तक जितनी तेजी से यह कार्य कर सकता है वह उतना ही सफल समझा जाता है। कमर पर अपने हाथो को रखकर अपनी पतली कमर को लचकाता हुआ तथा द्रुत गति से पैरो का विक्षेप करता हुआ भोजपुरी नर्तक बारात के शामियाने मे समाँ बाँध देता है। उसे देखकर दर्शको के मुँह से अनायास 'वाह-वाह' निकलने लगती है। कुछ गुण-ग्राही उसकी नृत्य-कला पर मुग्ध होकर अपनी गुण-ग्राहकता प्रकट करने के लिए उसके पास चवन्नी, अठन्नी और रुपया तक फेकने लगते हैं। यह नृत्य अधिक देर तक नहीं चलता। यह थोड़ी ही देर मे समाप्त हो जाता है और नाटकीय वस्तु के अभिनय का क्रम फिर प्रारम्भ हो जाता है। नृत्य तथा अभिनय के अवसर पर प्रायः बाजा बजता रहता है। विशेष कथोपकथन के अवसर पर उसे बन्द कर दिया जाता है जिससे श्रोता अच्छी तरह से वार्तालाप को सुन सके। इस तरह विदेसिया नाटक सगीत, अभिनय और नृत्य इन तीनो की त्रिवेणी है, जिसमे अवगाहन कर दर्शकगण परम आनन्द को प्राप्त करते है।

विदेसिया सम्प्रदाय

भिखारी ठाकुर एक अच्छे गवैया और सफल अभिनेता है अतएव जिस 'विदेसिया' नाटक के अभिनय मे वे स्वय भाग लेते हैं उसमे दर्शको की भीड का कुछ ठिकाना नहीं रहता। अपनी युवावस्था मे भिखारी ठाकुर विवाह के अवसर पर बारातो मे जाकर स्वयं अपने नाटक का अभिनय किया करते थे, परन्तु अब वे बूढ़े हो गए हैं अतः अभिनय करने के लिए अब प्रायः बारातो मे नहीं जाया करते। भिखारी के शिष्यो ने, जो उनके साथ उनकी मण्डली में नाचते तथा अभिनय किया करते थे—अपनी अलग-अलग मण्डलियाँ बना ली है और वे अपने को भिखारी का असली

शिष्य बतलाकर नाटक खेलने का व्यवसाय करते है। भिखारी के असली तथा साक्षात् शिष्य होने के कारण जनता इनकी मण्डली को नाटक करने के लिए बुलाती है। कुछ लोग, जो भिखारी ठाकुर के शिष्य नहीं हैं, वे झूठे ही अपने को उनका शिष्य बतलाते हैं और अभिनय के लिए एक 'गिरोह' (मण्डली) बनाकर नाटक किया करते हैं। भिखारी का शिष्य कहने मे ये अपने को गौरवान्वित समझते है और जनता भी इन मण्डलियों का आदर करती है। ऐसी नाटकीय मण्डलियाँ बलिया, गोरखपुर, छपरा तथा आरा जिले में सैकड़ो की सख्या में पाई जाती है।

इन उपर्युक्त जिलो में 'विदेसिया' नामक नृत्य तथा नाट्य का एक सम्प्रदाय (विदेसिया स्कूल आफ डास एण्ड ड्रामा) ही चल पड़ा है। इस प्रकार भिखारी ठाकुर को केवल 'विदेसिया' नाटक को लिखने तथा अभिनय करने का ही श्रेय नही प्राप्त है, बल्कि नृत्य और नाट्य के एक नये सम्प्रदाय को प्रवर्त्तित करने का भी गौरव प्राप्त है। इनको 'विदेसिया' नाटक-मण्डली की नकल पर आज सैकड़ो मण्डलियाँ स्थापित हैं जो 'विदेसिया' नाटक का अभिनय करके अपनी जीविका का उपार्जन किया करती हैं। आज 'विदेसिया' केवल एक नाटक-मात्र ही नही, प्रत्युत वह तो एक नाटकीय सम्प्रदाय का प्रतीक है।

'विदेसिया' नाटक का नामकरण उस घटना के आधार पर किया गया है जिसमे विदेस मे गये हुए किसी व्यक्ति की कथा का वर्णन है। प्रारम्भ मे 'विदेसिया' के नाम से जो नाटक खेले जाते थे उनका कथानक ऐसा ही हुआ करता था। परन्तु आजकल बहुत-से ऐसे छोटे-मोटे नाटक लिखे गए हैं "जिनमे भोजपुरी समाज—जैसे सास-पतोहू का झगड़ा, पिता-पुत्र मे वैमनस्य, भाई-भाई मे वैर, बाल-विवाह, वृद्ध-विवाह, बेटी बेचना तथा दान-दहेज की प्रथा—का चित्रण किया गया हैं। यद्यपि इन नाटको का कथानक विदेश मे गये हुए व्यक्ति की कथा नहीं है फिर भी इनको विदेसिया नाटक का नाम दिया गया है। इसका प्रधान कारण मूल बिदेसिया नाटक की लोकप्रियता तथा प्रसिद्धि ही मानी

जा सकती है। 'विदेसिया' की नकल पर एक परदेसिया गीत तथा नाटक भी प्रकाशित हुआ है, परन्तु वह विशेष प्रसिद्ध नहीं हो सका है।

'विदेसिया' के नाम से जो लोक-गीत भोजपुरी-प्रदेश में अत्यन्त लोकप्रिय हैं वह इस प्रकार हैं। इसमे प्रोषित-पतिका नायिका की विरह-व्यथा का वर्णन बड़े मर्मस्पर्शी शब्दो मे किया गया है[1] :

"मचिया बइठल धनी मने-मने समुझे से,
भुइयाँ लोटेला लामी केस रे विदेसिया ॥ १ ॥
गवना कराई सइयाँ घर बइठवले से,
अपने चलेले परदेस रे विदेसिया ॥ २ ॥
चढ़ली जवनियाँ बइरिनि भइली, हमरी से,
के मोर हरि हैं कलेस रे विदेशिया ॥ ३ ॥
केकरा ले लिखिके मै पतियाँ पठइबो से,
केकरा से पठवों सनेस रे विदेसिया ॥ ४ ॥
तोहरे कारन सइयाँ भभूती रमइबो से,
धरबो जोगनियाँ के भेस रे विदेसिया ॥ ५ ॥
कबलों ले फिरिहे दइब निरमोहिया से,
मोरा विरहिनियाँ के भाग रे विदेसिया ॥ ६ ॥
हमरो सुरति सइयाँ तुहु विसरवले से,
रहले सवति-रस पागि रे विदेसिया ॥ ७ ॥
दिनवा बितेला सइयाँ बटिया जोहत तोर,
रतिया बितेला जागि-जागि रे विदेसिया ॥ ८ ॥
घरी राति गइले पहर रात गइलें से,
धधके करेजवा में आगि रे विदेसिया ॥ ९ ॥
अमवा मोजरि गइले लगले टिकोरवा से,
दिन पर दिन पियराला रे विदेसिया ॥ १० ॥

---

१. भिखारी ठाकुर लिखित—विदेसिया नाटक से उद्धृत।

एक दिन बहि जइहें जुलुमी बयरिया से,
डारि पात जइहें भहराइ रे विदेसिया ॥ ११ ॥
झमकि के चढ़ली मैं अपनी अटरिया से,
चारु ओर चितवों चिहाइ रे बिदेसिया ॥ १२ ॥
कतहूँ ना देखों रामा सइयाँ के सुरतिया से,
जियरा त गइले मुरझाई रे विदेसिया ॥ १३ ॥

: ८ :

लोक-संगीत

लोक-गीतो की आत्मा लोक-सगीत है। लोक-सगीत अत्यन्त प्राचीन है। बहुत-से विद्वानो का मत है कि लोक-सगीत का प्रभाव शास्त्रीय सगीत पर बहुत पडा है। यदि यह कहा जाय कि शास्त्रीय सगीत का जन्म लोक-सगीत से हुआ है तो इसमे कुछ अत्युक्ति न होगी। अतः इसकी विशेषताओ का अध्ययन अत्यन्त आवश्यक है।

लोक-जीवन का सुन्दरतम प्रतिबिम्ब लोक-सगीत मे दिखाई पडता है, क्योंकि लोक-गीतो मे शब्दो और स्वरो के चयन मे कृत्रिमता का अभाव रहता है। इनमें लोक-जीवन का सीधा-सादा परिचय होता है। लोक-गीत सरल, सुन्दर, अनुभूतिमय तथा संगीतमय होते हैं। कदाचित् ही कोई ऐसा लोक-गीत हो जो लोक-संगीत से अनुप्राणित न हुआ हो।

भोजपुरी लोक-सगीत मे अकेले गाने से कहीं अधिक सामूहिक रूप (कोरस) से गाने का विशेष महत्त्व है। सच तो यह है कि लोक-संगीत के वास्तविक के रूप का परिचय सामूहिक गान मे ही मिलता है। भोजपुरी-प्रदेश में लोक-सगीत मे प्रयुक्त होने वाले वाद्यों में से ढोलक, खजड़ी, सारङ्गी, झाँझ और करताल उल्लेखनीय हैं। इनमे से ढोलक सबसे अधिक लोक-प्रिय तथा महत्त्वपूर्ण है। ढोलक के बाजे मे कहीं-कहीं अद्भुत विकास दिखाई पडता है। इसके पृथक् बोल होते हैं। कुछ ढोलक

बजाने वाले तो ऐसे होते हैं जो तबले के सदृश ही ढोलक पर भी पूर्ण विस्तार और चमत्कार दिखलाते हैं। लोक-गीत अधिकतर ढोलक पर ही गाए जाते हैं।

भोजपुरी लोक-गीतो मे प्रायः सात शुद्ध स्वरो और दो विकृत—कोमल गन्धार और कोमल निषाद-स्वरो का प्रयोग मिलता है अर्थात् उनमे मुख्यतः बिलावल, खमाज और काफी थाटो के स्वर लगते हैं। शास्त्रीय-सगीत की दृष्टि से भी इन थाटो के राग अपेक्षाकृत अधिक सरल और सुग्राह्य होते है। कुछ गीतो मे अन्य विकृत स्वरो का भी प्रयोग मिलता है। जैसे—उदाहरण के लिए कोमल धैवत और कोमल ऋषभ। इनमे भी कोमल ऋषभ का प्रयोग कोमल धैवत से कम मिलता है। तीव्र मध्यम से युक्त भोजपुरी गीत कदाचित् ही दो-चार मिलेगे। किसी-किसी गीत की स्वर-परिधि भी बहुत सक्षिप्त होती है। अधिकाश लोक-गीतो मे तीन-चार अथवा पाँच स्वर ही प्रयुक्त होते है। इस देश मे शास्त्रीय सगीत के प्रचार और विकास के साथ-साथ गाँव और नगर मे अधिकाधिक सम्पर्क होने के कारण लोक-गीतो की स्वर-सीमाएँ भी बढ़ती जा रही हैं।

लोक-धुन बहुत ही सरल होती हैं। परन्तु इनकी सरलता का यह तात्पर्य नही है कि इनमे गायन-क्रिया के सौन्दर्य-वर्द्धक उपकरणो का पूर्णतया अभाव है। ऐसे अनेक लोक-गायक पाए जाते हैं जो सरल-से-सरल धुन को गाते समय भी स्वभावतः अनेक प्रकार के खमटे, मुकरियाँ और मीड़ का प्रयोग अनायास करते हैं। शास्त्रीय संगीत मे अनेक रागो का जन्म लोक-धुनो से हुआ है, जैसे—आसावरी, झिंझोरी, पहाड़ी आदि।

भोजपुरी लोक-गीतो में प्रायः कहरवा, जत, दादरा, खेमटा और दीपचन्दी (चाँचर) तालों का प्रयोग अधिक पाया जाता है। इनमे से कहरवा ताल का प्रयोग तो प्रायः ८० प्रतिशत लोक-गीतो मे किया गया है। बहुरा, शीतला माता, पिड़िया, छठीमाता, सोरठी, कजरी, बिरहा, पचरा, गोड़ऊ, सोहनी, झूमर, पूर्वी, निर्गुन और पाराती

(भजन) आदि गीत 'कहरवा' ताल मे गाए जाते है और सोहर, जनेऊ, गवना, गोधन, फगुआ, चैता, जतसार आदि गीत 'जत' ताल में गेय हैं। सुप्रसिद्ध भोजपुरी लोक-गीत विदेशिया को दीपचन्दी ताल मे गाया जाता है। झूमर—जिसे स्त्रियाँ झूम-झूमकर समवेत स्वर (कोरस) से गाती है—दादरा मे गाया जाता है। कही-कही यह भी देखने मे आता है कि एक ही लोक-गीत दो विभिन्न तालो में गेय है। उदाहरण के लिए विदेशिया गीत 'दीपचन्दी' तथा 'जत' इन दोनो तालो मे गाया जाता है। इसी प्रकार से गायक लोग झूमर को 'कहरवा' तथा 'दादरा' दोनो तालो मे गाते हैं।

इन पक्तियो के लेखक ने लगभग १०० भोजपुरी लोक-गीतो की स्वर-लिपि (नोटेशन) बड़े परिश्रम से श्री महेश नारायण सक्सेना एम० ए०, लेक्चर, प्रयाग विश्वविद्यालय की सहायता से तैयार की है। भोजपुरी लोक-गीतो मे कहरवा, जत और दीपचन्दी ताल ही अधिक प्रचलित तथा महत्त्वपूर्ण हैं। अतः इन तालो मे गाये गए लोक-गीतो की स्वर-लिपि नमूने के रूप मे यहाँ प्रस्तुत की जाती है :

गीत—झूमर
ताल—कहरवा
स्थायो

सारे म—म प प--प म प—प म ग रे रे
दिन वा ऽके व इ री रे सा सु ऽ न न दि या मैं

सा ग
सा—रे ग रे —रे ग प प—म ग ग रे—
का ऽ क रो हो ऽ रा ति बै री ऽ अँ जो रि या ऽ

अन्तरा (१)

सा रे म म पप प प प म प—प म ग रे रे
क ह त सु नत मे वि सर गइ ल ऽ ऑ जो रि या मैं

सा
सा—रे ग रे—रे ग गप प — म ग — रे—
का ऽ क रो हो ऽ बल मा अज बे ऽ सो वइ ऽ या ऽ

अन्तरा (२)

सा रे म म प प प प म प — प म ग रे रे
चि ऊँ टि हि का टि का टि बल मा ऽ ज ग व लीं मैं

सा ग
सा—रे ग रे—रेरे ग प प—म ग रे रे—
का ऽ क रो हों ऽ गोद में रो वे ऽ ब ल क वा ऽ

अन्तरा (३)

सा रे म म प प प प मम प—प म ग रे रे
ठो ऽ कि हि ठो कि ह म बल का ऽ सु त व लीं मैं

सां
सा — रे ग रे — रे ग प पप—म ग रे रे —
का ऽ क रों हो ऽ बो ले ला गलि ऽ चु चु हि या ऽ

गीत—चैता

ताल—जत

मात्रा—चौदह

स्थायी

रे — — म — म — प ध — ध — — ध
मा ऽ ऽ नि ऽ क ऽ ह म ऽ रो ऽ ऽ हि
× २ ० ३

ध — नी पध नीध पम म म — — मप ध — म
रै ऽ ऽ लेऽ ऽऽ ऽऽ हो रा ऽ ऽ माऽ ऽ ऽ ऽ
× २ ० ३

ध म
प ध — प — म — पम गरे — — — — —
ज मु ऽ ना ऽ ऽ ऽ मेऽ ऽऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ
× २ ० ३

ध ध — ध — ध — ध प — ध — — नी
के हू ऽ ना ऽ हो ऽ खो जे ऽ ला ऽ ऽ प
× २ ० ३

प
पध नीध — प म — म म — — मप ध — म
दाऽ ऽऽ ऽ र थ ऽ हो रा ऽ ऽ माऽ ऽ ऽ ऽ
× २ ० ३

ध म
प ध — प म — — पम गरे, — — — — —
ज मु ऽ ना ऽ ऽ ऽ मेऽ ऽऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ
× २ २ ३

अन्तरा (१)

प ध — सा — सा — सां सा — सा — सानी ध
ओ ही ऽ रे ऽ ज ऽ मु न ऽ वा ऽ केऽ ऽ
× २ ० ३

नी
— प ध सा — रे — रे सा — सा — सानी धप
ऽ चि क टि ऽ ऽ ऽ म टि ऽ या ऽ ऽऽ ऽऽ
× २ ० ३

ध ध — ध — ध — ध प — ध — नी —
च ल ऽ त ऽ मे ऽ पाँ व ऽ बि ऽ छि ऽ
× २ ० ३

प प
पध नीध — म — म — म — — मप ध — म
लइ ऽऽ ऽ ले ऽ हो ऽ रा ऽ ऽ माऽ ऽ ऽ ऽ
× २ ० ३

ध
प ध — प — म — पम गरे — — — — —
ज मु ऽ ना ऽ ऽ ऽ मेऽ ऽऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ
× २ ० ३

इस गीत के अन्य अन्तरे निम्नाकित हैं :

ओहि रे जमुनवा के करिया पनिया,
देखत में मन घबरइले हो रामा
जमुना में ॥ २॥

तोरा लेखे ग्वालिनि मानिक हिरैले,
मोरा लेखे चान छपितवा हो रामा।
जमुना में ॥३॥
दास बुलाकी चइत घाँटो गावे,
गाइ-गाइ बिरहिनि समुझावे हो रामा।
जमुना में ॥४॥

गीत—विदेसिया
ताल—दीपचदी
स्थायी

सा	रे	—	रे	प	म	—	ग	मग	—	सारे	—	सा	—
र	हि	ऽ	या	ऽ	त	ऽ	क	तऽ	ऽ	मोड	ऽ	री	ऽ
×			२				०			३			
सा	रे	—	म	—	ग	—	रे	सा	—	सा	—	—	—
भा	री	ऽ	भइ	ऽ	ले	ऽ	अॅ	खि	ऽ	यॉ	ऽ	ऽ	ऽ
×			२				०			३			

अन्तरा (१)

प	प	—	ध	सा	सा	—	नी	सा	नी	ध	नीधप	—	
अ	म	ऽ	वा	ऽ	मो	ऽ	ज	रि	ऽ	ग	इ	लेऽ	ऽ
×			२				०			३			
प	ध	—	प	ध	धप	—	म	ग	—	सारे	—	सा	—
म	हु	ऽ	आ	ऽ	टऽ	ऽ	प	क	ऽ	गइ	ऽ	ले	ऽ
×			२				०			३			

सा	रे	—	रेप	—	म	—	ग	मग	—	रेसरे	—	सा	—
क	त	ऽ	दि	ऽ	न	ऽ	ब	टिऽ	ऽ	याऽऽ	ऽ	जो	ऽ
×			२				०			३			
सा	रे	—	रेम	—	ग	—	रे	सा	—	सा	—	—	—
हइ	बे	ऽ	रेऽ	ऽ	बि	ऽ	दे	सि	ऽ	या	ऽ	ऽ	ऽ[1]

१. इस गीत के अन्य अन्तरों के लिए 'भोजपुरी नृत्य-नाट्य' शीर्षक अध्याय के अन्तर्गत 'बिदेसिया' नामक गीत देखिए ।

: ६ :

लोक-कला

लोक-कला उतनी ही प्राचीन है, जितनी पुरानी मानव-सभ्यता। प्राचीन काल से ही मानव अपने हृदय की भावनाओं को रंग और रेखा का आकार देकर उसे साकार करने का प्रयत्न करता रहा है। गाँवों में लोक-कला के आज भी दर्शन होते है। यद्यपि किसी प्रकार का प्रोत्साहन प्राप्त न होने के कारण यह धीरे-धीरे नष्ट हो रही है। ग्रामीण कलाकार यद्यपि कला के सिद्धान्तों से परिचित नहीं होते, फिर भी उनकी कृतियाँ बड़ी रमणीय तथा चित्ताकर्षक होती हैं।

भोजपुरी-प्रदेश मे लोक-कला प्रधानतया निम्नाङ्कित रूपो मे पाई जाती है—

(१) भित्ति-चित्र,

(२) अल्पना,

(३) थापे,

(४) मृण्मयी मूर्तियाँ (टेरा कोटाज),

(५) धातु-मूर्तियाँ,

(६) गोदना

(७) मेहदी,

(८) महावर ।

स्त्रियाँ विभिन्न उत्सवो और त्यौहारो पर अनेक देवी-देवताओ की मूर्तियों को घर की दीवार पर अकित करती हैं। विवाह के अवसर पर वर के लिए घर के एक कमरे को विशेष रूप से सजाया जाता है, जिसे 'कोहबर' कहते है। इस घर मे अनेक भित्ति-चित्र बने रहते हैं, जिनमे गणेश, महावीर और देवी की मूर्तियाँ अकित की जाती है। इन चित्रो को बनाने के पहले दीवार को गोबर से लीपते हैं। जब वह सूख जाती है, तब उस पर चित्र-कर्म प्रारम्भ करते हैं। कहीं-कही इन चित्रो को बनाने मे (१) लाल, और (२) सफेद, दो रगो का विशेष रूप से प्रयोग किया जाता है। गेरू को घोलकर लाल रग तैयार किया जाता है। सफेद रग के लिए चावल के आटे को घोलते है, अथवा चावल को चार-छः घण्टे भिगोकर छोड़ देते हैं। फिर उसे पीसकर सफेद रग बना लिया जाता है। इन्हीं दोनो रंगो की सहायता से चतुर गृहिणियो की कोमल अँगुलियाँ इन सुन्दर चित्रों का निर्माण करती हैं। सभी मंगल-कार्यों में गणेश का पूजन आवश्यक होता है। हनुमान कार्य-सिद्धि मे सहायक होते है। अतः इनका चित्र विशेष रूप से अकित किया जाता है। ये भित्ति-चित्र बहुत टिकाऊ होते हैं। स्त्रियाँ या लड़कियाँ विशेष व्रतो के अवसर पर भी चित्र बनाती हैं। कार्तिक-अगहन के महीनो मे कुमारी लड़कियाँ 'पिड़िया' का व्रत करती हैं। इस समय ये गोबर के छोटे-छोटे पिण्डो (टुकड़ो) की गोल आकृति बनाकर उन्हे दीवार पर चिपकाती हैं। ये पिण्ड वर्गाकार रूप में चिपकाये जाते हैं। इसके साथ ही अनेक चित्र भी बनाए जाते हैं।

मागलिक अवसरो पर अल्पना बनाने की प्रथा भी प्रचलित है। विवाह के अवसर पर जब बारात लड़की वाले के घर आती है, उस समय 'द्वार-पूजा' या वर की पूजा के लिए थोड़ी-सी जमीन को लीपकर अल्पना बनाई जाती है। यह काम गाँव के नाई की स्त्री करती है।

वह सूखे आटे को लेकर चुटकी से ज़मीन पर गिराती जाती है। इस प्रकार वह एक वर्गाकार रचना करती है। इस वर्ग के बीच मे गोली आकृति भी बनी रहती है, जहाँ कलश की स्थापना की जाती है। सत्यनारायण की कथा के अवसर पर तथा अन्य मागलिक कृत्यो के समय विभिन्न प्रकार की अल्पना का निर्माण किया जाता है। भोजपुरी मे इसे 'चौक पूरना' कहते हैं।

काठ के तख्ते के ऊपर चावल से भी अल्पना बनाई जाती है। कभी-कभी इसके लिए रगो का भी प्रयोग किया जाता है।

हाथ की अगुलियो का थप्पा या ठापा मारकर जो चित्र अकित किये जाते है, उन्हे 'थापा' कहते है। विवाह के लिए जो मण्डप तैयार किया जाता है, उसके बॉसो को गाडने के पहले उन पर उस लडकी की पॉचो अंगुलियो का 'थापा' लगाया जाता है, जिसका विवाह होने वाला है। यह थापा चावल को पीसकर बनाये गए सफेद रग से लगाया जाता है। इसी प्रकार पर्वतीय जिलो—विशेषकर नैनीताल—मे दीपावली के अवसर पर स्त्रियाँ लक्ष्मी के आने के लिए मार्ग बनाती हैं। यह मार्ग लाल और सफेद रग को मिलाकर 'मुट्ठी' का थापा लगाकर तैयार किया जाता है। यह थापा बडा कलात्मक होता है और बड़े परिश्रम से तैयार किया जाता है।

मृण्मयी मूर्तियाँ—जिन्हे अग्रेजी मे 'टेराकोटाज़' कहते हैं—को बनाने की प्रथा अत्यन्त प्राचीन काल से चली आ रही है। मोहेन्जोदड़ो मे जो खुदाई हुई है, उसमे बहुत-सी मिट्टी की मूर्तियाँ निकली है। गॉवो मे देहाती कुम्भकार के हाथो द्वारा यह कला आज भी सुरक्षित है। दीपावली के अवसर पर ये ग्रामीण कुम्भकार गणेश, सरस्वती, हनुमान और दुर्गा आदि देवी-देवताओ की इतनी सुन्दर मूर्तियाँ बनाते है कि उन्हे सदा देखते ही रहने की इच्छा होती है। इन मूर्तियो मे विभिन्न अगो के प्रमाण का सुन्दर सामञ्जस्य पाया जाता है। इन मूर्तियो पर जो रग किया हुआ होता है, वह भी कुछ कम आकर्षक नही होता। इनको

देखकर यह आश्चर्य होता है कि इन ग्रामीण कलाकारो ने ऐसी सुन्दर मूर्तियाँ किस प्रकार बनाई। इन मूर्तियो के अतिरिक्त ये कुम्भकार सुराही तथा घड़ो पर सुन्दर नक्काशी भी काढते हैं। विवाह के अवसर पर मण्डप में जो 'कलश' रखा जाता है, वह विभिन्न देवताओ के चित्रो से अकित रहता है। इस समय जिन मिट्टी के घड़ो—जिन्हे 'कुण्डा' कहते है—मे मिठाई और खाजा भरकर दिया जाता है, उन पर भी भिन्न-भिन्न पशु-पक्षियो के चित्र विभिन्न रगो से बनाये गए होते है।

धातु—विशेषकर सोने और चाँदी—पर देवताओ की मूर्तियाँ उत्कीर्ण की जाती है। शीतला देवी की पूजा के अवसर पर चाँदी के ऊपर उनकी मूर्ति उनके वाहन के साथ बनाई जाती है। जो पुरुष अपनी प्रथम पत्नी की मृत्यु के उपरान्त दूसरा विवाह करते हैं, वे अपनी द्वितीय पत्नी के पहनने के लिए सोने का बना हुआ एक ऐसा आभूषण ले आते है, जिस पर उनकी प्रथम स्त्री की प्रतिकृति अंकित रहती है। इस गहने को सम्भवतः 'सौत' कहते है। इसी प्रकार ताँबे के ऊपर विशेष मन्त्र-तन्त्र उत्कीर्ण किये जाते है। लोगो का विश्वास है कि ऐसे यन्त्रो को पहनने से मनुष्य विघ्न-बाधाओ से सुरक्षित रहता है।

भोजपुरी प्रदेश में विवाह के पश्चात् प्रत्येक स्त्री के लिए गोदना गोदाना आवश्यक है। स्त्रियो की ऐसी धारणा है कि ऐसा न करने से अगले जन्म मे किसी नीच योनि मे उत्पन्न होना पड़ता है। आजकल तो गोदना गोदने के लिए मशीने चल पड़ी है, परन्तु देहातो मे आज भी यह कार्य धतूरे के दूध मे काजल मिलाकर रंग तैयार करके सूई चुभोकर किया जाता है।

ये गोदने विभिन्न आकृति के बनाए जाते हैं। कोई गोले होते हैं, तो कोई वर्गाकार। चतुर गोदने वाली स्त्री विभिन्न प्रकार की फूल-पत्तियों को गोदने मे काढ़ती है। आजकल शिक्षित कही जाने वाली स्त्रियो मे इसकी प्रथा प्रतिदिन कम होती जा रही है, फिर भी गाँवो मे इसका रिवाज अभी वैसा ही है। नीच जाति की स्त्रियाँ तो न केवल अपनी

दोनो बाहुओ पर, बल्कि पेट, पीठ तथा दोनो पैरो मे भी गोदना गोदवाती हैं। गत पूर्ण कुम्भ (फरवरी १६५४) के अवसर पर एक विशेष सम्प्रदाय के ऐसे अनुयायी देखने मे आये, जिनके—स्त्री और पुरुष दोनो के—शरीर के प्रत्येक अंग मे (यहाँ तक कि सिर मे भी) राम-राम अंकित था।

स्त्रियाँ सावन के महीने मे अपने हाथो मे मेंहदी लगाती हैं। वे मेंहदी के पत्तो को सिल पर खूब महीन पीसती है और उसमे सरसो का थोड़ा तेल डाल देती हैं जिससे मेंहदी का रंग अधिक टिकाऊ हो जाता है। वे सीक से अपने हाथो मे मेंहदी लगाती है। स्थान की कमी के कारण उन्हे बड़ी बारीकी से काम लेना होता है। वे भाँति-भाँति की त्रिकोणात्मक, चतुष्कोणात्मक और पचकोणात्मक आकृतियाँ रेखाओ और बिन्दियो के सहारे आकर्षक शैली मे बनाती जाती हैं। जब तक उनके हाथ की मेंहदी सूख नही जाती तब तक वे कोई काम नही करती है। इसलिए काम न करने वाले व्यक्ति के लिए भोजपुरी मे यह कहावत प्रचलित है कि 'उनुकरा हाथ मे मेंहदी लागल बा।'

विशेष मांगलिक अवसरो पर स्त्रियाँ अपने पैरो मे महावर लगाती हैं, जिसे 'गोड़ भरना' कहते हैं। यह महावर पैरो के चारो ओर लगाया जाता है। बीच मे स्वस्तिक की आकृति का चिह्न भी कभी-कभी बनाया जाता है। चतुर नाईन अनेक प्रकार के फूल-पत्ते भी महावर द्वारा काढ़ती है।

: १० :

उपसंहार

पिछले पृष्ठो मे भोजपुरी भाषा और साहित्य का सक्षिप्त परिचय पाठको के सामने उपस्थित किया गया है। इसके साथ ही भोजपुरी रंगमच, लोक सगीत तथा लोक-कला का भी विवरण देने का विनम्र प्रयास किया गया है। इस प्रकार भोजपुरी लोक-साहित्य के प्राय: प्रत्येक अंग का दिग्दर्शन इस पुस्तक मे हुआ है।

जब से इस देश ने स्वतन्त्रता की प्राप्ति की है तब से भोजपुरी जनता मे एक नवीन जागरण दिखाई पड़ता है, एक नवीन चेतना का जन्म लक्षित होता है। वह नवीन चेतना है अपने साहित्य तथा संस्कृति की रक्षा करना। फलस्वरूप अनेक समितियो, सम्मेलनो तथा परिषदो का जन्म हुआ है। आरा के कुछ विद्वानो तथा उत्साही कार्यकर्ताओं ने मिलकर एक 'भोजपुरी समिति' की स्थापना की है, जिसके तात्वावधान मे 'भोजपुरी' नामक मासिक पत्रिका प्रकाशित होती है। इस पत्रिका के सम्पादक-मण्डल मे भोजपुरी जनपद के अनेक धुरन्धर विद्वान् है जिनमे बाबू शिवपूजन सहाय, राहुल साकृत्यायन, प० बलदेव उपाध्याय तथा डॉ० उदयनारायण तिवारी का नाम प्रसिद्ध है। परन्तु इसके उत्साही

तथा कर्मठ प्रबन्ध सम्पादक है श्री रघुवंश नारायण सिह। आप ही के अटूट उत्साह, और अथक लगन से इस पत्रिका का सम्पादन तथा संचालन बडे सुचारु रूप से हो रहा है। इस पत्रिका द्वारा भोजपुरी के अनेक नवयुव्क कवि प्रकाश मे आ रहे है तथा सैकड़ो लोक-गीत, कथाएँ, मुहावरे तथा कहावते प्रकाशित हो रही है। भोजपुरी समिति ने इस जनपद मे प्रचलित लोक-साहित्य के सग्रह का कार्य भी अपने हाथो मे लिया है। इसने अनेक लोक-गाथाओ—जैसे लोरकी और विजय-माल आदि—के सग्रहकर्ताओं को पुरस्कार देने की घोषणा भी की है। भोजपुरी भाषा मे लिखे गए नवीन कवियो के काव्यो के प्रकाशन का बीडा भी इसने उठाया है। स्थानीय कवियो, लेखको, साधु-सन्तो तथा वीरो के जीवन-चरित को प्रकाशित करके इनकी कीर्ति को नष्ट होने से बचाया गया है। इस प्रकार भोजपुरी समिति तथा 'भोजपुरी' पत्रिका इस साहित्य की रक्षा के लिए भगीरथ प्रयत्न कर रही है।

इस जनपद के कवियों, लेखको तथा विद्वानो को एक स्थान पर एकत्रित होकर विचार-विनिमय करने का अवसर मिल सके इस हेतु भोज-पुरी साहित्य-सम्मेलन की स्थापना भी की गई है। इस सम्मेलन का अधि-वेशन प्रति वर्ष होता है। इसका सर्व प्रथम अधिवेशन सीवान (जिला छपरा, बिहार) मे हुआ था जिसके सभापति थे हिन्दी तथा सस्कृत के प्रकाण्ड विद्वान् पं० बलदेव उपाध्याय। इसके पश्चात् त्रिपिटिकाचार्य महापडित राहुल साकृत्यायन, श्री जगजीवन राम (केन्द्रीय सरकार के मन्त्री) आदि लोगो ने इस आसन को सुशोभित किया है। इस सम्मेलन द्वारा भोजपुरी साहित्य को गति और प्रगति मिली है। इसके द्वारा प्रचार का कार्य भी हो रहा है। इस सम्मेलन के साथ ही भोजपुरी कवि-सम्मेलन भी हुआ करता है जिसमे भोजपुरी के अनेक नवयुवक कवियो को अपनी काव्य-कला का प्रदर्शन करने का सुअवसर मिलता है। बहुत से ऐसे कवि, जिन्हे कोई जानता भी नही था, धीरे-धीरे प्रकाश मे आ रहे है। आशा है कि यह सम्मेलन भोजपुरी साहित्य की रक्षा तथा निर्माण मे

विशेष सहायक सिद्ध होगा ।

अभी कुछ वर्ष हुए बिहार-राज्य की सरकार हिन्दी मे स्थायी साहित्य के निर्माण के लिए तथा बिहारी-भाषाओ—जिनमे भोजपुरी विस्तार की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है—के विकास के हेतु 'बिहार राष्ट्रभाषा परिषद्' की स्थापना की है, जिसका प्रधान श्रेय बिहार के तत्कालीन शिक्षा-सचिव श्री जगदीश चन्द्र माथुर आई० सी० एस० को प्राप्त है। इस परिषद् ने भोजपुरी जनपद मे बिखरे हुए हजारो लोक-गीतो, कथाओ, कहावतो और मुहावरो के सग्रह का कार्य प्रारम्भ किया है तथा इस कार्य के लिए वैतनिक कार्यकर्ता नियुक्त किये गए है। इस प्रकार कुछ लोक-साहित्य सग्रहीत भी हुआ है। यह परिषद् दुर्गाशकर प्रासद सिह की लिखी हुई पुस्तक 'भोजपुरी कवि और काव्य' का प्रकाशन भी कर रही है। इसने डॉ० उदयनारायण तिवारी एम० ए०, डि० लिट्० की भोजपुरी भाषा सम्बन्धी पुस्तक को भी प्रकाशित किया है।

बिहार की सरकार ने 'नृत्य-नाट्य-सगीत परिषद्' की स्थापना भी की है, जिसका उद्देश्य है बिहार-राज्य मे प्रचलित लोक-नृत्य, लोक-नाट्य और लोक-सगीत की रक्षा करना तथा उन्हे प्रोत्साहन देना। इस परिषद् की मुख-पत्रिका का नाम 'बिहार थियेटर' है जिसमे इन विषयो के अधिकारी विद्वानो द्वारा लेख प्रकाशित होते हैं। पहले इस पत्रिका के अवैतनिक सम्पादक थे श्री जगदीशचन्द्र माथुर। इस परिषद् द्वारा लोक-सगीतज्ञो तथा नाटक खेलने वालो को बड़ा प्रोत्साहन मिला है। बहुत से लोक-नृत्य—जिन्हे लोग घृणा की दृष्टि से देखते थे—अब महत्त्व-पूर्ण समझे जाने लगे हैं। इस परिषद् द्वारा बडा उपयोगी कार्य हो रहा है और आशा है कि लोक-कला को इससे बडा बल और सम्बल मिलेगा।

आल इण्डिया रेडियो के लखनऊ, इलाहाबाद तथा पटना स्टेशनो से पंचायत-घर का प्रोग्राम प्रतिदिन प्रसारित किया जाता है। इस प्रोग्राम मे बहुत-सी भोजपुरी लोक-कथाएँ तथा लोक-गीत भी होते हैं।

अनेक भोजपुरी एकाकी नाटक भी प्रसारित किये जाते हैं। इससे नगर-निवासियों को भी लोक-गीतो को सुनने का अवसर मिलता है और लोक-गीतो के गाने वाले को प्रतिष्ठा और धन प्राप्त होता है। रेडियो एक ऐसा साधन है जिसके द्वारा लोक-साहित्य का प्रचार बड़ी आसानी से किया जा सकता है और इसके प्रति लोक-रुचि उत्पन्न की जा सकती है।

विदेशो मे लोक-साहित्य के संकलन तथा प्रकाशन के लिए अनेक समितियाँ और परिषद् स्थापित है। परन्तु इस देश मे विद्वानो का ध्यान इस दिशा मे अभी विशेष आकृष्ट नहीं हुआ है। केन्द्रीय तथा प्रान्तीय सरकारो ने भी इस सम्बन्ध मे अभी कुछ विशेष कार्य नहीं किया है। आवश्यकता इस बात की है कि हमारी केन्द्रीय सरकार एक ऐसी 'राष्ट्रीय लोक-साहित्य परिषद्' की स्थापना करे जिसका कार्य इस महान देश के विभिन्न प्रान्तो (राज्यो) मे पाये जाने वाले लोक-साहित्य का सग्रह, सम्पादन तथा प्रकाशन हो। डॉ० ग्रियर्सन द्वारा किये गए भारतीय भाषा-सर्वे की तरह इस देश के लोक-साहित्य का सर्वे होना चाहिए तथा ऐसा उपाय करना चाहिए जिससे यह अमूल्य साहित्य काल के गाल मे न चला जाय। आयरलैण्ड की सरकार ने 'आयरिश फोकलोर कमीशन' की स्थापना करके इस देश की लोक-वार्ता की रक्षा की है। केन्द्रीय सरकार ने भी 'सगीत नाटक अकादेमी' नाम से इसी प्रकार की संस्था स्थापित की है।

भोजपुरी-प्रदेश के विद्वानो का यह कर्तव्य है कि वे भोजपुरी जनपद के लोक-वार्ता (फ़ोकलोर) तथा लोक-साहित्य की रक्षा के लिए 'भोजपुरी लोक-साहित्य परिषद्' की स्थापना करे। इस परिषद् का एक-मात्र उद्देश्य लोक-गीतो, गाथाओ, कथाओ, सूक्तियो, सुभाषितो, कहावतो और मुहावरो का संग्रह करके उनका वैज्ञानिक पद्धति से सम्पादन करके प्रकाशन होना चाहिए। लोक-गीतो का सग्रह करना ही पर्याप्त नहीं है बल्कि गवैयो से उन्हे गवाकर उनके रेकार्ड भी बनाने चाहिएँ। इसके साथ ही लोक-गीतो की स्वर-लिपि (नोटेशन) भी तैयार करना आव-

श्यक है।

भोजपुरी लोक-गीतो के कुछ सग्रह तो प्रकाशित भी हो चुके हैं परन्तु लोक-वार्ता के सग्रह की ओर भी ध्यान देना चाहिए। वर्तमान लेखक ने अपने नवीनतम ग्रन्थ मे 'भोजपुरी फोकलोर' की बड़ी विशद मीमासा की है तथा इसके विभिन्न अगो पर प्रकाश डालने का प्रयत्न किया है। ऐसी आशा की जाती है कि इस पुस्तक के प्रकाशित हो जाने पर एक बहुत बड़े अभाव की पूर्ति हो जायगी।

भोजपुरी का भविष्य बडा उज्ज्वल है। इसके साहित्य की रक्षा तथा सवर्धन के लिए अनेक विद्वान् कृत-संकल्प है। हिन्दी की बोलियो मे शोध का जितना कार्य भोजपुरी को लेकर हुआ है उतना सम्भवतः अन्य बोलियो पर नही। इसीसे इसके महत्त्व का अनुमान किया जा सकता है। आशा है भावी विद्वान् भी अपनी प्रतिभा के प्रसाद से इसके भण्डार को भरने की कृपा करेंगे।

अध्ययन-सामग्री

(क) ग्रन्थ

१	डॉ० कृष्णदेव उपाध्याय	भोजपुरी-ग्राम-गीत (भाग १)
	,, ,,	भोजपुरी ग्राम-गीत (भाग २)
	,, ,,	भोजपुरी लोक-साहित्य का अध्ययन (प्रेस मे)
	,, ,,	भोजपुरी लोक-सगीत (प्रेस मे)
२	दुर्गाशंकर प्रसादसिंह	भोजपुरी लोक-गीतो मे करुण रस
	,, ,,	भोजपुरी कवि और काव्य (प्रेस मे)
३	श्री आर्चर	भोजपुरी ग्राम्य-गीत
४	डॉ० उदयनारायण तिवारी	दि ओरिजिन एण्ड डेवेलेपमेण्ट ऑफ भोजपुरी (अप्रकाशित)
५	डॉ० विश्वनाथ प्रसाद	स्टडीज इन भोजपुरी फानिटिक्स (अप्रकाशित)
६.	डॉ० ग्रियर्सन	लिंग्विस्टिक सर्वे आफ इण्डिया भाग ६, खण्ड २

(ख) लेख

डॉ० कृष्णदेव उपाध्याय	भोजपुरी लोक-गीतो मे काव्य (हिन्दुस्तानी, प्रयाग)
,, ,, ,,	भोजपुरी लोक-गीतो मे 'दिव्य' की प्रथा ('सम्मेलन-पत्रिका' लोक-संस्कृति अङ्क, सं० २०१० वि०)

डॉ० कृष्णदेव उपाध्याय	भोजपुरी लोकगीत ('जनपद' भाग १ अङ्क १)
,, ,, ,,	भोजपुरी लोक-सगीत 'बिहार थियेटर' भाग १, अङ्क ४)
,, ,, ,,	भोजपुरी लोक-गीतो मे यज्ञोपवीत सस्कार। ('जनपद' भाग १, अङ्क ५)
,, ,, ,,	एन इएट्रोडक्शन टु भोजपुरी फोक-साङ्गस एएड बैलेड्स (जनरल आफ अमेरिकन फोकलोर फिलाडेलफिया, अमेरिका)
,, ,, ,,	ए जेनेरल सर्वे आफ फोकलोर एक्टिविटीज़ इन इण्डिया (मिडवेस्ट फोकलोर, अमेरिका)
,, ,,	भोजपुरी फोकलोर एएड बैलेड्स ईस्टर्न एन्थ्रोपोलाजिस्ट, लखनऊ)
डॉ० उदयनारायण तिवारी	ए डायलेक्ट आफ भोजपुरी (जनरल आफ बिहार एएड ओड़िसा रिसर्च सोसाइटी)
,, ,,	भोजपुरी लोकोक्तियॉ ('हिन्दुस्तानी अप्रैल-जुलाई १६३६)
,, ,,	भोजपुरी मुहावरे ('हिन्दुस्तानी अप्रैल-अक्टूबर १६४० ई० जनवरी। १६४१ ई०)
,, ,,	भोजपुरी पहेलियॉ ('हिन्दुस्तानी' अक्तूबर-सितम्बर सन् १६४२ ई०)
पं० गणेश चौबे	लोक-गीतो का अलंकरण ('साहित्य' पटना, वर्ष १, अङ्क ३)

पं० गणेश चौबे	भोजपुरी लोक-गीतो में चित्र-कला ('जनपद', वर्ष १, अङ्क ३)
,, ,,	भोजपुरी लोक-कथाएँ ('आजकल' लोक-कथा विशेषाङ्क)
दुर्गाशंकर प्रसादसिंह	भोजपुरी लोक-गीतो मे गौरी का स्थान (नागरी प्रचारिणी पत्रिका, काशी)।

इसके अतिरिक्त 'भोजपुरी' मे अनेक लेख प्रकाशित हुए हैं जिनका उल्लेख स्थानाभाव से यहाँ करना कठिन है। डॉ० ग्रियर्सन तथा अन्य पाश्चात्य विद्वानो द्वारा लिखे गए लेखो का उल्लेख पुस्तक मे यथास्थान कर दिया गया है।